१.५

ओ३म्

प्रेरणा

गुरुकुल पत्रिका



गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर

डा० बाबूगढ़ (गाजियाबाद) उ०प्र०

वर्ष १९७९ मूल्य ३)

❀ ओ३म् ❀

प्रेरणा

दिव्यम् आर्षं महा-ज्योतिर्, ज्वलतु हृदये सदा ।
तेनैव सर्व-लोकस्य, कल्याणं भविष्यति ।।

प्रेरक

श्रद्धेय स्वर्गीय देव स्वामी जी महाराज

संरक्षक

आचार्य धर्मपाल शास्त्री
व्याकरण साहित्याचार्य विद्याभास्कर

सम्पादक

आचार्य सोमव्रत विद्याभास्कर
वेद साहित्य व्याकरणाचार्यकाव्यतीर्थ, साहित्यरत्न एम० ए०

पत्रिका प्रबन्धक एवं सहसम्पादक

महेन्द्रपाल आर्य एम० ए०

प्रकाशक

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर
बाबूगढ़ छावनी (गाजियाबाद)

मुद्रक :
श्री विश्व भारती प्रेस
31/B, न्यू नगर पालिका मार्केट, कोठी गेट, हापुड़

प्रेरणा



बहुत से फूल उपवन में खिलते रहेंगे,
पर तुमसा न कोई सुमन अब फिर खिलेगा ।।
अनेकों पथ–प्रदर्शक भी आते रहेंगे,
पर तुमसा ना कोई अब रहबर मिलेगा ।।

–आचार्य सोमव्रत विद्याभास्कर

– गुरुकुल पत्रिका

छपते - छपते

गत वर्ष गुरुकुल के वार्षिक महोत्सव पर दुबलधना निवासी महाशय हरि सिंह जी ने यज्ञ – शाला – निर्माण के लिए एक हजार रुपये दिये तथा इसके लिए धन - संग्रह में सहयोग भी दिया। भगत झनक सिंह तथा महाशय जबर सिंह हरियाणा निवासी भी प्रति वर्ष गुरुकुल के लिए सहयोग करते रहते हैं।

महाशय भोपाल सिंह जी द्वारा अन्न - धन - संग्रह कार्य - कर्ताओं के लिए प्रेरणा - प्रद है। जिस भी महानुभाव ने गुरुकुल के कार्य में किसी भी प्रकार का सहयोग दिया है, मैं उन सब का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं। अन्त में सभी सज्जनों से यही प्रार्थना है –

आपका सहयोग हरदम हम सभी को चाहिए।
आप अपने नेह से इस पौध को सरसाइए॥
आज तक मिलता रहा सहयोग हमको आपका।
आगे भी मिलता रहे सहयोग नित्य आपका॥

आपका अपना
ही

नरपत सिंह [मुख्याधिष्ठाता]

* ओ३म् *



फूलों की महक से तो बस उपवन बदल जाएगा ।
विचारों की महक से पर दिलो-दिमाग बदल जाएगा ॥



उपवनों में फूल खिलते हैं रंग-२ के।
हर की पसन्द होती अपनी अलग अलग।।

आज गुरुकुल ततारपुर को देखने का शुभावसर मुझे मिला। यह देखकर बहुत हर्ष हुआ कि यहाँ का गुरुकुल पहिले की अपेक्षा बहुत उन्नति कर रहा है। विद्या-विकास के साथ यहाँ के छात्रों को व्यायाम में रुचि देख और अधिक प्रसन्नता हुइ।

ओमानन्द सरस्वती
भूतपूर्व आचार्य भगवानदेव
(संस्थापक गुरुकुल झज्जर)
५–१०–७६

× × × × ×

आज गुरुकुल ततारपुर महाविद्यालय को अचानक देखने का अवसर प्राप्त हुआ। वर्तमान में यह गुरुकुल अतीत की अपेक्षा अधिक उन्नत है।······यहाँ पढ़ाई का वातावरण है। छात्रों का स्वास्थ्य भी अत्युत्तम है।····· अध्यापकों की लगन तथा पढ़ाई की व्यवस्था देखते हुए ऐसा लगता है कि यह गुरुकुल दिनों दिन उन्नति पथ पर रहेगा।

स्वर्गीय प्रकाशवीर शास्त्री
(सदस्य लोकसभा)
६–११–७६

× × × × ×

आज दिनांक २१–११–७६ को गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर में आने का

सुअवसर मिला । ब्रह्मचारियों की नियमित दिनचर्या, आचार्यों की कार्य कुशलता, विद्वता एव पाठन-शैली वैदिक युग के अतीत चित्रों को साक्षात् करती है ।

प्राचार्य प्रेमसिंह नागर
भारतीय भवन संस्कृत महाविद्यालय
गाजियाबाद

× × × × ×

यहाँ के आचार्य श्री ब्रह्मचारी धर्मपाल जी को मैं कई वर्षों से जानता हूँ । उनका रहन-सहन, स्वभाव और स्वास्थ्य सराहना के योग्य है । विद्यार्थियों का स्वास्थ्य बहुत अच्छा है । विद्यार्थियों में सेवा-भाव, सभ्यता और शिष्टाचार देखकर मेरा चित्त बहुत प्रसन्न हुआ । शिक्षा का इस गुरुकुल में अच्छा प्रबन्ध है ।

अमर स्वामी
प्रधान सार्वदेशिक दयानन्द संन्यासी वानप्रस्थ मंडल
ज्वालापुर हरिद्वार
२–७–७७

× × × × ×

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर में दो दिवस निवास किया ।····· गुरुकुल का वातावरण प्राचीन ऋषियों की याद दिला रहा था ।······आचार्य धर्मपाल शास्त्री के प्रयत्न से गुरुकुल का वातावरण बहुत ही श्रेष्ठ है । उनके तप-त्यागमय जीवन से गुरुकुल का भविष्य उज्ज्वल है ।

महात्मा नारायण स्वामी
क्रान्तिकारी
कुलपति गुरुकुल एटा

× × × × ×

आभारी बन करके जीना सभी सुखों का घर है ।
ऐहसानफरोशी से जीना पशु-जीवन से बदतर है ॥

अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से इस समय संस्था का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है ।······संस्कृत के प्रचार तथा प्रसार में संस्था का कार्य सराहनीय है ।

मुरलीधर कोठियाल
सहायक निरीक्षक संस्कृत पाठशाला,
मेरठ क्षेत्र, मेरठ

× × × × ×

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर एक अच्छी प्रगतिशील संस्था है । सुव्यवस्थित ढंग से अध्ययन-अध्यापन का कार्य चलता है ।······विविध योगासनों द्वारा छात्र अपने शरीर एवं चरित्र का निर्माण करते हैं । प्राणायाम आदि की क्रियाओं में अध्यापकों के अतिरिक्त छात्र भी प्रवीण हैं ।

जयनारायण शुक्ल
सहायक निरीक्षक संस्कृत पाठशाला
मेरठ क्षेत्र, मेरठ

× × × × ×

मैं गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर के स्थापना-दिवस महोत्सव में सम्मिलित हुआ । गुरुकुल की सुव्यवस्था, अधिकारियों की कार्य-निष्ठा एवं विनम्रता मुझे सदा स्मरण रहेगी । गुरुकुल की यज्ञशाला के निर्माण के लिए आर्य जनता दिल खोलकर दान दे । यह गुरुकुल आपके हर प्रकार के सहयोग का सत्पात्र है ।

आचार्य विश्वबन्धु शास्त्री
[प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, लखनऊ, उत्तर प्रदेश]

बिन्दु से विकास की ओर

प्राचीन काल से प्रचलित वैदिक धर्म का प्रवाह महाभारत के पश्चात् साम्प्रदायिकता के मरुस्थल में सर्वथा शुष्क हो चुका था। इसलिए आर्य जाति वैदिक धर्म की पवित्र मान-मर्यादाओं को भुलाकर सम्प्रदायवाद के भयंकर मरुस्थल में भटकने लगी। वैदिक मर्यादा के पुनरुद्धार के लिये स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज ने अपने जीवन काल में सामाजिक कुरीतियों को दूर करने का भरसक प्रयास किया है। उसी कड़ी में स्वामी मुनीश्वरानन्द जी का कार्य भी अविस्मरणीय है। आपका सारा जीवन विद्यार्जन और आर्य समाज के लिए समर्पित है। वस्तुतः आर्य समाज का प्रचार ही आपके लिये प्राणों का संगीत है, छात्रों का निर्माण आपके लिये सद्व्यसन है। इसी भावना को बलवती करने के लिए आपने १९६३ में ग्राम तनारपुर में आर्य समाज की स्थापना करके "तपोभूमि" नाम से एक आश्रम का निर्माण प्रारम्भ कर दिया। अपने स्वभाव के अनुसार आस-पास के ग्रामीण क्षेत्रों में वेदों की दुन्दुभि बजाई। इतने पर भी आपको सन्तोष न हुआ और भावी उपदेशक विद्यालय की योजना बनाकर १३ जौ० १९६५ ई० को गुरुपूर्णिमा के शुभ अवसर पर "व्यास विद्यापीठ" नाम से पूज्यपाद स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती (आचार्य भगवान्देव जी) द्वारा उद्घाटन करवाया। ५ छात्रों को लेकर अध्ययन-अध्यापन का कार्य प्रारम्भ किया। साथ साथ सामाजिक कार्य भी चलते रहे। १-२-३ नवम्बर ६५ को ऋषि निर्वाण उत्सव के अवसर पर पं० जुगलकिशोर वानप्रस्थ को संन्यास की दीक्षा देकर स्वामी परमेश्वरानन्द सरस्वती बनाया। १७-२० फरवरी ६६ को विद्यापीठ से गुरुकुल झज्जर की स्वर्ण जयन्ती पर छात्रों का समूह सम्मिलित हुआ। ३-४-५ मार्च १९६६ को प्रथम वार्षिक महोत्सव मनाया गया, उस अवसर पर श्री चौ० शेरसिंह जी भालोठ प्रधान वेद प्रचार मण्डल पा० स्मा, ने वानप्रस्थ की दीक्षा ली और स्वामी सत्यमुनि नाम हुआ। सबसे महत्वपूर्ण कार्य भूमिदान का हुआ, सर्वश्री म० रघुवीर

"अति" मानव के लिए सदा ही दुखदायी होता है ।

अति वर्षा से जगती-जीवन तहस-नहस होता है ।।

सिंहजी, म० बरफसिंह जी, १२ विश्वे तथा श्री श्यामसिंह जी. जागरसिंह जी, कालेसिंह जी, गजराजसिंह जी, मा० भीकमसिंह जी, चौ० रामप्रसाद जी ७ विश्वे एवं ग्राम पंचायत ७ विश्वे तथा ४ हजार रुपये नकद मिले । जिससे संस्था को विस्तार पाने का अवसर मिला । प्रदत्त भूमि में भवन निर्माण कार्य प्रारम्भ हो गया । श्री धर्मवीर जी शास्त्री ने तथा मा० भीकमसिंह जी ने, अध्यापन का कार्य सम्भाल लिया । १६ अक्टूबर १९६६ को छात्रावास के दो कमरों का उद्घाटन स्व० श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री द्वारा हुआ । ३ जनवरी १९६७ को गोरक्षा आन्दोलन में संस्था ने बड़े उत्साह से भाग लिया और एक मास कारावास में रहे । मार्च १९६७ में द्वितीय वार्षिक महोत्सव हुआ उस अवसर पर श्री हरिशरण जी गम्भीर ने संन्यास लिया और विद्यानन्द सरस्वती नाम हुआ । १ बीघा जमीन पह० श्योसिंह जी ने दान में दी । अब विद्यालय प्रगति की तरफ बढ़ने लगा । श्री देशपाल दीक्षित के परामर्श से उड़ीसा-बिहार के ८ ब्रह्मचारी प्रविष्ट हुए । स्थापना दिवस पर श्री रामसिंह त्यागी ने संन्यास ग्रहण करके स्वामी विरक्तानन्द साधु हुए । मुख्याधिष्ठाता श्री गंगासहाय मुखिया ने इस अवसर पर संस्था को उठाने में पूर्ण सहयोग दिया । ३० मार्च १९६८ को माननीय निरीक्षक महोदय संस्कृत पाठशाला, मेरठ क्षेत्र मेरठ पधारे और संस्था के भविष्य की पूर्ण योजना तैयार करके गये । वाराणसेय सं० वि० वि० वाराणसी की परीक्षायें प्रारम्भ हो गईं । ग्रीष्मकाल में छात्र संख्या बढ़ गई । ८ जौलाई से २८ जौ० ६८ तक श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी ने "आर्य प्रचारक शिक्षण शिविर" का आयोजन किया । उससे बहुत भजनोपदेशक लाभान्वित हुए । २८ जौ० को स्वामी जी ने क्षेत्रीय लोगों को एकत्रित करके प्रबन्ध समिति बनाकर सम्पूर्ण कार्यभार सौंपने की घोषणा की । गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर के नाम से पञ्जीकरण करवाया । आचार्य नरेन्द्रदेव के निर्देशन में विद्यालय प्रगति करने लगा । विधिवत् श्री चौ० गंगाशरण जी की अध्यक्षता में श्री गंगासहाय मुखिया जी ने कार्य किया । धर्मार्थ औषधालय का सञ्चालन वानप्रस्थ सत्यमुनि जी ने प्रारम्भ किया । व्यायामप्रिय छात्रों को देखकर जनता ने अपना वरद हस्त बढ़ाया और गुरुकुल में नवीन उत्साह का सञ्चार हुआ । प्रदर्शन करने के लिए छात्र आर्य समाज के उत्सव में जाने लगे ।

प्रबन्ध समिति के अधिकारी निम्न प्रकार रहे—

	प्रधान	मुख्याधिष्ठाता	कोषाध्यक्ष	प्रधानाचार्य
१९६९—	चौ० गंगाशरण	म० रघुवीर सिंह	ला० भवानी प्रसाद	आ० नरेन्द्रदेव
१९७०—	म० नरपत सिंह	मुखिया गंगासहाय	ला० भगवत प्रसाद	आ० घनश्याम सिंह जी
१९७१—	रामसिंह आर्य	,, ,,	भीकम सिंह आर्य	,,
१९७२—	ला० बाबूराम जी	म० रघुबीर सिंह	,,	,,
१९७३—	,,	,,	,,	आ० धर्मेन्द्र जी
१९७४—	,,	,,	,,	धर्मपाल शास्त्री
१ ७५—	म० नरपत सिंह आर्य	,,	,,	चन्द्रप्रकाश चतुर्वेदी
१९७६-७७-७८—	रामसरण आर्य	म० नरपत सिंह आर्य	,,	धर्मपाल आर्य

अतिथि निचय का जिस घर में सत्कार सदा होता है ।
उस घर में सुख-शान्ति-सुवर्षण प्रतिपल ही होता है ॥

सभी अधिकारियों ने अपने कार्यकाल में विद्यालय की प्रगति में अपना यागदान दिया है । इन अधिकारियों की सेवाओं को विद्यालय सदैव स्मरण करता रहेगा । निरीक्षक महोदय प्रतिवर्ष आते रहते हैं, उनकी भावना है कि विद्यालय प्रथम श्रेणी में आ जावे । वर्तमान अधिकारी उस भावना को पूर्ण करने का सतत प्रयास कर रहे हैं । यदि ग्रामीण तथा नगर की संस्कृत प्रेमी जनता अपना सहयोग देकर उक्त भावना को पूण करने की सोचे तो हमारा स्वप्न साकार हो उठेगा । संस्कृत जगत् की अनुपम सेवा होगी । मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि आप अपने विद्यालय को अभी से अपने स्मृति पटल पर अंकित रखते हुए भारतीय संस्कृति तथा वैदिक धर्म को अभ्युदय की तरफ ले जाने में तन-मन-धन अर्पित कर अपना एवं समाज का कल्याण करेंगे ।

भावी योजनायें—(१) प्रेरणा का मासिक प्रकाशन; (२) सिंह द्वार का निर्माण; (३) यज्ञशाला निर्माण; (४) विद्यालय भवन निर्माण; (५) अतिथि भवन निर्माण; (६) ध्यानयोग, सत्संग भवन निर्माण; (७) पुस्तकालय भवन निर्माण; (८) प्रिंटिंग प्रेस स्थापना; (९) क्रीड़ास्थल तथा वाटिका निर्माण, आटा चक्की, प्रेषालय निर्माण; (१०) आयुर्वेदिक फार्मेसी स्थापना; (११) गोशाला स्थापना; (१२) साहित्य प्रकाशन विभाग स्थापना ।

प्राचार्य धर्मपाल शास्त्री विद्याभास्कर

मुझे मत पढ़िये

छिपाने को छिपा लेता विकल चित्कार में अपना,
मगर अभिव्यक्ति की तृष्णा मुझे छिपने नहीं देती ।।

मानव भावनाओं का पुञ्ज है। वह अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए अवसर की खोज में लगा रहता है। यदि आदमी को यह अवसर न मिले, तो निश्चय ही आदमी के जीवन में विकार उत्पन्न होने लगता है। इन विकारों को सही दिशा देने के लिए मानव अभिव्यक्ति के साधनों का उपयोग करता है। इससे मनुष्य की भावनाओं का उदात्तीकरण होता है और मानव के अन्दर निहित शक्तियों का साथ-साथ विकास भी होता रहता है। इन शक्तियों का समुचित दिशा में विकास हो जाने का नाम ही दिव्य जीवन है।

प्राचार्य धर्मपाल जी शास्त्री विद्याभास्कर का निरन्तर यही प्रयास रहता है कि गुरुकुलीय छात्र की प्रतिभा का विकास होता रहे। आर्थिक संकट के बावजूद भी छात्र-हित-अभिलाषी प्राचार्य जी ने पत्रिका प्रकाशन के लिए उत्साह-पूर्वक सक्रिय सहयोग दिया, ताकि छात्र लेखन की दिशा में अपने व्यक्तित्व को समर्पित कर सकें।

आर्य कुमार सभा में समय-समय पर करुणा-कलित-मानस छात्र-कल्याण-प्रणयी प्राध्यापकों ने प्रवचन किया था। मैं उनके प्रवचनों को नोट करता गया और उन प्रवचनों को यहाँ पर अब प्रकाशित किया जा रहा है। केवल आवश्यकतानुसार लेख के परिधान के अनुकूल परिवर्तित कर दिया गया है। शेष प्राध्यापक कृत प्रवचनों का संकलन यथा समय प्रकाशित किया जायेगा।

यदि नरेन्द्र कुमार "कलीना" वास्तव्य छात्र प्रेस कॉपी तैयार न करता, तो पत्रिका प्रकाशन समय पर न हो पाता। गुरु-शिष्य-परम्परा में धन्यवाद का रिवाज नहीं है, इसीलिए मैं आयुष्मान् नरेन्द्र कुमार "कलीना" को धन्यवाद न

पेटू जन से आतिथेय भी प्रतिपल घबड़ाता है ।
जैसे याचक को लखकर कृपण सदा कतराता है ॥

देकर यही आशीर्वाद दूँगा कि यह विनयशील छात्र भविष्य के आकाश में ध्रुव तारे के समान जगमगाता नक्षत्र बने ।

सूरज सा भासमान बन करके जग में तुम चमको ।
हिमकर सा शीतल बन तुम कीर्ति-गगन में नित दमको ।
ईश तुम्हारे जीवन को भद्र सुपथ-गामी कर दें ।
गुण गण दायक लेखन की तुममें प्रतिभा को भर दें ।

पत्रिका के सम्पादन में अध्यापक तथा सभी छात्रों ने पर्याप्त सहयोग दिया है । पत्रिका को हर प्रकार से सुन्दर बनाने का प्रयास किया गया है, फिर भी यदि कोई दोष रह गया है तो इसे मानवीय दुर्बलताओं का परिणाम समझना चाहिए ।

पश्यन्ति दुर्जनाः दोषं, गुणं दोषेऽपि सज्जनाः ।
गृह्णाति भ्रमरो नित्यं, मरन्दं न तु कण्टकम् ॥

(सूक्ति सीमन्तिनी)

× × ×

यद्यपि नर का हर प्रयत्न, निर्दोष नहीं होता है ।
अल्पबुद्धि निर्मित रचना में, दोष-योग होता है ॥

× × ×

सुजन सदा हर जगह गुणों को, लख प्रमुदित होता है ।
भ्रमर कहीं कण्टक दर्शन में, समय कभी खोता है ॥

(पद्य पाथेय)

(आचार्य सोमव्रत विद्याभास्कर)

प्रेरणा के प्रेरक

—उपाचार्य रवि गुरुकुल ततारपुर

इस संसार में जो महान् आत्मायें अपने सुख, स्वार्थ को त्यागकर मानव कल्याण के लिए निज जीवन को समर्पित कर अपने किये हुए पुण्य कर्मों से समाज और राष्ट्र के लिए आदर्श एवं प्रेरणा का पथ प्रशस्त करती हैं, भला ऐसी पुण्यात्माओं को कौन भुला सकता है। इन्हीं पुण्यात्माओं में से एक थे हमारे पूज्य गुरुदेव स्वर्गीय श्री आचार्य देव स्वामी जी महाराज। जिनका कुछ समय का सान्निध्य ही जीवन के लिये प्रेरणा का स्रोत बन जाता था। अध्ययन अध्यापन से लेकर आश्रम की समस्त व्यवस्थाओं में उन्हीं की चेतना शक्ति संचरित होती रहती थी। एक आचार्य या गुरु में जो क्षमता होनी चाहिए वे सभी पूज्यपाद गुरुदेव में विद्यमान थीं। सदाचार का ग्रहण, शब्दार्थों का संग्रह, बुद्धि का विकास कराने में सर्वथा सिद्ध थे। व्याकरण शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित थे। शास्त्र जिज्ञासा से जो भी छात्र उनके चरणों में पहुँचा वह पूर्ण सन्तुष्ट होकर ही गया। प्रत्येक छात्र को पुत्रवत् स्नेह देकर उसकी पूर्ण प्रगति के लिये उन्होंने सर्वथा ध्यान रखा। ऐसे महामना पूज्य गुरुदेव के हम सदैव ऋणी रहेंगे।

उनकी एक अपनी अभिलाषा थी कि हमारे सभी स्नातक मिलकर एक पत्रिका का प्रकाशन करें जिसका नामकरण उन्होंने स्वयं ही प्रेरणा के नाम से किया था दुर्भाग्य से उनके जीवनकाल में प्रेरणा का प्रकाशन न हो सका, मात्र वे प्रेरणा के प्रेरक बन गये। देव और दैत्यों का संग्राम सदा चलता रहा है। देवता स्वरूप पूज्य गुरुदेव की पवित्र साधना से प्राप्त प्रतिष्ठा को दैत्य सहन न कर सके, असुरों ने तो यज्ञों का विध्वंस करना ही सीखा है और हिंसा का सहारा लेकर देवों को संतप्त किया है। २७ जुलाई की रात्रि को किन्हीं दैत्यों ने गोली मार कर उनकी आत्मा की हत्या कर दी। इस प्रकार उन तपोनिष्ठ कर्मयोगी का सम्पूर्ण जीवन समाज सेवा यज्ञ में स्वाहा हो गया।

आज वे हमारे बीच नहीं हैं किन्तु उनकी पवित्र स्मृतियों के साथ उनका अमर स्वरूप हमारे हृदयों में सदैव सुरक्षित रहेगा। उस पुण्यात्मा के लिये हम अपनी सादर श्रद्धाञ्जलि समर्पित करते हैं।

प्रस्तुत प्रेरणा के प्रेरक को हमारा शतशः नमन।

अपने हितैषियों से

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर के समस्त प्रेमी बन्धुओं से मेरा नम्र निवेदन है कि विगत तीन वर्षों में आपने अपने इस प्रिय विद्यालय को जो अपार सहयोग देकर विद्यालय की प्रगति में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है जिसके परिणामस्वरूप आज आपकी यह संस्था आर्य समाज के शिक्षा क्षेत्र में अपनी उचित भूमिका निभा रही है। अपनी यथाशक्ति सामर्थ्य से शिक्षा के प्रसार एवं आर्य समाज के प्रचार को ही अपना लक्ष्य बनाया है जिसकी पूर्ति में यह संस्था सतत रूप से प्रयत्नशील है।

वर्तमान में संस्था की प्रगति और प्रतिष्ठा का सारा श्रेय हमारे उदारचेता धनी महानुभावों एवं उन सहयोगी सज्जनों को है जिन्होंने प्रतिपल "मनसा वाचा कर्मणा" से हमारी प्रबन्ध समिति का कन्धे से कन्धा मिलाकर अविस्मरणीय योग-दान दिया है। अन्नदाताओं ने अन्न दान से हमारा विशेष सहयोग किया है। विद्यादान में हमारे नवयुवक शिक्षकों ने प्रशंसनीय परिश्रम किया है जिसके कारण छात्रों की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती ही जा रही है।

आप सबके सहयोग से आपके विद्यालय ने प्रगति भी की है यह सब आप सबके ही परिश्रम का फल है वर्तमान को ही हमें उद्देश्य की पूर्ति नहीं मान लेनी है बल्कि भविष्य को इससे भी अधिक स्वर्णिम बनाना है। भविष्य में उन सभी अभावों की पूर्ति करनी है, जिससे संस्था के सर्वोन्मुखी विकास में बाधा हो रही है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि हमारे हितैषी बन्धुजन इस संस्था के प्रति पूर्ण आत्मीय भावना से अपना तन-मन-धन देकर इस विद्यालय की भावी योजनाओं की पूर्ति कर संस्था के भविष्य को उज्जवलतम बनाने का भरसक प्रयत्न करते रहेंगे। इसी आशा और विश्वास के साथ अपने समस्त गुरुकुल हितैषी महानुभावों के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ।

भवदीय—

रामसरण आर्य

(प्रधान)

अधिष्ठाता की लेखनी से

मुझे कुछ कहना है !

आपका यह प्रिय गुरुकुल निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर हो रहा है। यह आप सभी के पवित्र उदार सहयोग का ही पुण्यफल है कि आज इस छोटी सी सस्था में ७ शिक्षक ९० छात्र अहर्निश अपने अध्ययन अध्यापन की कार्य कुशलता के साथ-साथ आश्रम व्यवस्था को सर्वथा सफल बनाते हुए अपने कर्त्तव्यों के प्रति-श्रद्धापूर्वक संलग्न है। अब से तीन वर्ष पूव आपने मेरे निर्बल कन्धों पर मुख्याधिष्ठाता के रूप में जो भार सौंपा था उसको मैंने अपनी यथाशक्ति सामर्थ्य से पूर्ण प्रयत्न से निभाया है। इन तीन वर्षों में आपकी संस्था ने जो प्रगति की है, वह सर्वविदित है। आचार्य पर्यन्त छात्रों के अध्ययन की व्यवस्था ९० छात्रों के भरण-पोषण का भार, भवन निर्माण कार्य जो अर्थाभाव में अधूरा है। अन्यान्य कार्य जिनसे विद्यालय का गौरव बढ़ा है, जिसको देखकर हम सभी गर्व का अनुभव करते हैं। संस्था का कार्य एक व्यक्ति के सहारे नहीं चल सकता, सामाजिक कार्य में समाज का सहयोग बहुत आवश्यक है। समयानुसार गुरुकुल प्रेमियों ने तन-मन-धन से सदैव अपना पवित्र सहयोग देकर हमारा उत्साह वर्द्धन, किया है जिससे संस्था के स्वरूप में सुन्दर परिवर्तन आया है। इसके लिये हमारे सभी सहयोगी धन्यवाद के पात्र हैं। साथ ही प्रबन्ध समिति के सभी सदस्य जिन्होंने पूर्ण मनोयोग से संस्था के प्रत्येक कार्य में सहर्ष सहयोग देकर संस्था को प्रगतिशील बनाने में अपना पूर्ण उत्तरदायित्व कर्त्तव्यनिष्ठ होकर निभाया है। वे सभी प्रशंसा के पात्र हैं। महाविद्यालय के कर्त्तव्यपरायण आचार्य महानुभावों ने अपने अथक परिश्रम से अध्ययन अध्यापन व्यवस्था को सुचारु रूप से प्रभावशाली बनाकर विद्यालय के परिणाम में विशेष

भद्र गुणों का अनुकरण सदा सुखदायक होता है ।
भद्र भवन का वासी ही जीवन-नायक होता है ।।

सफलता प्राप्त की है । जिसके फलस्वरूप कई छात्र राजकीय सहायता छात्रवृत्ति रूप में प्राप्त करते हैं । एतदर्थ मैं अपने प्राचार्य महोदय एवं सभी आचार्यों के लिए साधुवाद देता हूँ । समय-समय पर निरीक्षक महोदय संस्कृत पाठशालाओं एवं अन्य विद्वान् महानुभावों ने अचानक जो निरीक्षण किया और यहाँ की व्यवस्था से प्रसन्न होकर हमारा जो कार्य निर्देशन किया है मैं उन सभी महानुभावों का हृदय से कृतज्ञ हूँ । अन्त में मैं पुनः अपने सभी सहयोगियों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए आप सबसे यही आशा करता हूँ कि अब तक आपने हमें जो सहयोग दिया वही सहयोग भविष्य में भी आप बनाये रखेंगे जिससे अपने अधूरे कार्यों को पूर्ण कर हम संस्था के भविष्य को उज्जवलतम बना सकें ।

आप सबके सहयोग का इच्छुक—
म० नरपत सिंह आर्य
मुख्याधिष्ठाता

वैदिक प्रार्थना

[ऋषि—मेधातिथि काण्व; देवता—अग्निमरुत्; छन्द—गायत्री]

ये महो रजसो विदुर्विश्वे देवासो अद्रुहः ।
मरुद्भिरग्न आ गहि ॥
ऋग्वेद १।१९।३।

[अग्ने] हे आलोकमय ! अग्रशील परमेश्वर ! [ये] जो मरुत्-गण [महः] महान् [रजसः] अन्तरिक्ष के विषय में [विदुः] सब कुछ जानते हैं [विश्वे] उन सब [देवासः] प्रकाशमय/दिव्य-शक्तिमय [अद्रुहः] द्रोह भावना से रहित [मरुद्भिः] प्राण-शक्ति के साथ [आगहि] इस यज्ञ में पधारिये ।

मैं आस्था के दीप को लेकर तुम्हारे पथ पर बढ़ता चला आया । मुझे यह भी मालूम नहीं मैं किस ओर बढ़ता गया ? मुझे विश्वास था तुम मुझे एक दिन अवश्य अपना लोगे । तुम्हारे द्वार से अब तक कोई निराश होकर नहीं लौटा है । मैंने सुना है कि कोई भूला-भटका एक बार तुम्हारे द्वार पर पहुँच भर जाये, फिर तुम उसे लौटने नहीं देते हो । तुम हमेशा ही आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हो । मैं उसी को प्राप्त करने तुम्हारे द्वार पर आया हूँ । मेरा मन चाहता है कि मैं कभी तुम्हारे इस आलोक-मन्दिर के द्वार से न लौटूँ, पर इन्द्रियाँ मुझे खींच ले जाती हैं ।

लो टूट गया जीवन का पावन मन्दिर । मैं जीवन भर मन्दिरों में घूमता रहा और हृदय के विशाल अन्तरिक्ष को भूल गया । मुझे तुम्हारा सहारा चाहिए, अन्यथा मैं वासना के सागर को कैसे पार कर पाऊँगा ? जो प्राणमय मरुत् हृदय-लोक की सब बातों को जानते हैं, मैं उन सबको वासना के दीप पर शलभ बनाकर जला चुका हूँ, और अब तुम्हारी कृपा को चाह रहा हूँ । मैं तुम्हारी कृपा को प्राप्त

अनुचित-उचित निकष मानव का पावन मानस होता ।
संशय पल में सचमुच मानस है निर्णायक होता ।।

कर सकूँ, मुझमें इतनी पात्रता कहाँ ? भक्तों की मण्डली में तुम्हारी दयालुता और उदारता की चर्चा सुनकर बस चला आया हूँ ।

मत लो नाथ ! अन्न और धैर्य की परीक्षा । मैं एक टूटा हुआ इंसान हूँ । अब मुझे अधिक मत झुकाओ, नहीं तो मैं बिलकुल टूट जाऊंगा । तुम तो टूटे हुए खिलौने जोड़ते हो । प्रकाशमय, द्रोह-रहित दिव्य शक्तियों के साथ मेरे इस छोटे से जीवन-यज्ञ में पधारो । मैं आज तुम्हारे तर्क को नहीं सुनूँगा । तर्क के संसार को ढहा कर आया हूँ, ताकि मेरा विश्वास तर्क के आगे ठहर सके ।

(हृदय वीणा, चतुर्थ झंकार)

卐

यह गुरुकुल परिवार हमारा

यह गुरुकुल परिवार हमारा ।
छोटे-बड़े सभी आपस में, सदा प्यार सबको करते हैं ।
भूलें तो होती रहती हैं, पर भूलों को ना लखते हैं ।
स्नेह, दया अरु क्षमा-शीलता, यही हमारी महा-सम्पदा ।
पर गुण को निज मन से लखना, मिलती शिक्षा यही सर्वदा ।
दोष किसी का मत लखना तुम, सकल सुखों का यही पिटारा ।

यह गुरुकुल परिवार हमारा ।

प्रेरणा (ण)

अनुग्रह शील नर इस जग में सदा सुखी होता है ।
बिना अनुग्रह मानव जग में कष्ट बीज बोता है ॥

आचार्य शिष्य के दुर्गुण को, हरने में तत्पर रहता है।
शिष्य सदा गुरुजन सेवा में, परम हर्ष अनुभव करता है।
चरित-सम्पदा ही मानव, जग में सबसे पावन धन है।
इसीलिए इसकी रक्षा में, सदा समर्पित गुरु-जीवन है।
गुरु शिष्य सौजन्य सुधा पर आधारित सौभाग्य हमारा।

यह गुरुकुल परिवार हमारा।

विद्या विनय विवेक मनुज के, जीवन का सुन्दर भूषण है।
सयंम के प्रदीप्त दीपक से, भग जाता अवगुण दूषण है।
इसीलिए गुरुकुल शिक्षा में, संयम का संगीत गूँजता।
सदाचार का पूजक बनकर, वर्णी इसको सदा पूजता।
क्योंकि बिना ना इसके उगता, मानवता का धवल सितारा।

यह गुरुकुल परिवार हमारा

मात-पिता-गुरु-राष्ट्र-भक्ति की, यहाँ सुशिक्षा मिलती।
ब्रह्मचर्य के विमल-सलिल से, जीवन लतिका खिलती।
ऋषि दयानन्द प्रेरित पथ पर, सभी यहाँ चलते हैं।
मानवता के फूल यहाँ पर, इसीलिए खिलते हैं।
गुरुकुल शिक्षा बिना कभी भी, मिले न राष्ट्र किनारा।

यह गुरुकुल परिवार हमारा।

[आचार्य सोमव्रत विद्याभास्कर]।

॥ ओ३म् ॥

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर

के

संस्थापक



श्री स्वामी मुनीश्वरानन्द जी सरस्वती

त्रिवेदतीर्थ

जीवन का स्वर्णकाल

आचार्य-धर्मपाल शास्त्री, विद्याभास्कर

जीवन खत्म हुआ तो, जीने का ढंग आया ।
जब शमा बुझ गयी तो, महफिल में रंग आया ॥

(नत्था सिंह)

जीवन में प्रतिपल कुछ न कुछ आश्चर्य कारक घटनायें घटती रहती हैं। वस्तुतः मनुष्य का यह जीवन स्वयं ही विस्मय कारक है । आदमी जब जीवन के विषय में सोचता है, तब तक आदमी की जिन्दगी में जवानी का असर समाप्त हो जाता है। और जब जीवन में वासनाओं के तूफान के कारण होश नहीं रहता, केवल जोश ही जोश रहता है, उस समय आदमी होश के दामन को पकड़ना बिलकुल पसन्द नहीं करता है। जीवन में होश भी हो और साथ ही साथ जोश भी हो, यह बहुत कम देखने को मिलता है। मनुष्य के जीवन में जवानी एक ऐसा ही समय है, जो रत्नों से भी भरा हुआ है और जहर से भी भरा हुआ है। जवानी में शक्ति का सागर उमड़ता है और इस सागर के उमड़ते ही आदमी की विवेक शक्ति नष्ट हो जाती है । जवानी के संदर्भ में निम्न वचनों को हमें एक बार अवश्य पढ़ लेना चाहिए ।

रहती है कब, बहारे जवानी तमाम उम्र ।
मानिन्द बूये गुल, इधर आई उधर गई ॥

सदा न फूलै तोरई, सदा न सावन होय ।
सदा न यौवन थिर रहे, सदा न जीवे कोय ।।

यह सत्य है और अति प्रसिद्ध है कि जैसे बुढ़ापे में बुद्धिमत्ता होती है वैसे ही ही जवानी में अविवेकता होती है। It is a truth but too well known, that rashness attends youth, as prudence does old age. (सिसरो)

वस्तुतः जिस प्रकार धनुष से छूटा हुआ तीर वापिस नहीं आता है, उसी प्रकार

जैसे पर्वत में हिम–गिरि की ना कोई उपमा है।
उसी प्रकार भाषा में संस्कृत भी अनुपमा है॥

गया हुआ यौवन लौटकर नहीं आता है। आदमी अपने को संभाल लेता है, तो उसका जीवन खुशियों का खज़ाना बन जाता है। वक्त और सागर की लहरें किसी की प्रतीक्षा नहीं करती हैं।

वक्त को जिसने नहीं समझा उसे मिटना पड़ा है।
बच गया तलवार से तो फूल से कटना पड़ा है॥ (नीरज)

भारत के समाज शास्त्रियों ने जीवन को चार भागों में बांटा था। १–ब्रह्मचर्यकाल २–गृहस्थ काल ३–वानप्रस्थ काल ३–संन्यास काल। ब्रह्मचर्य काल मानव जीवन का सर्वोत्तम काल है। ब्रह्मचारी शब्द का अर्थ है– ब्रह्म (ईश्वर) चारी (चलने वाला) ब्रह्म की ओर चलने वाला। ब्रह्म का शास्त्रों में अनेक अर्थ है। यथा, वेद, ज्ञान, ईश्वर, शक्ति आदि। ब्रह्मचारी ज्ञानार्जन के लिए अपनी समस्त शक्ति को लगा देता है, इसीलिए वह ब्रह्म पथ का पथिक बन जाता है। ब्रह्मचर्य काल में छात्र अपनी शक्तियों को गुरु के सहयोग से पहचानता था और फिर उस शक्ति को जीवन निर्माण में लगा देता था।

ब्रह्मचर्य काल में छात्र अपने जीवन में एक क्षमता उत्पन्न करता है, जिसके कारण उसका जीवन आनन्द के पथ पर धीरे धीरे बढ़ने लगता है। वह इस काल में विद्याध्ययन तो करता ही था, किन्तु साथ ही साथ जीवन के उन रहस्यों को भी पकड़ने का प्रयास करता था, जिसके कारण जीवन में एक ऐसा संगीत पैदा हो जाता था, जो जीवन भर अपनी मधुर आवाज से जीवन के प्रत्येक कोने को भर देता था।

यह जीवन एक गीत बन जाता है। ब्रह्मचर्य की साधना के लिए मन का सयम आवश्यक है। यदि मन पर संयम नहीं है, तो जीवन बुराईयों के मार्ग पर धीरे धीरे बढ़ने लगता है। मन मनुष्य के जीवन को सुखमय भी बना देता है और क्षण में ही दुखों से भर देता है। "वस्तुतः जिस व्यक्ति ने अपने मन को वश में कर लिया, उसके काबू में सारा संसार हो जाता है। जो व्यक्ति अपन मन को काबू में नही कर पाता है वह ससार के बन्धन में बंध जाता है।

मनो यस्य वशे तस्य भवेत्सर्वं जगद्वशे।
मनसस्तु वशे योऽस्तिस सर्वं जगतो वशे॥

यदि यह मन आपके वश में हो गया, तो आपको यह विश्वास कर लेना चाहिए कि जीवन में कल्याण का द्वार खुल गया है। वस्तुतः आप एक दिन दिव्य शक्ति के स्वामी बनकर रहेंगे। आपके प्रत्येक शब्द में आत्मा का बल उद्दाम सागर की तरह लहरेगा। भविष्य का प्रत्येक मानवीय सुख आपके जीवन के आस पास विकसित होकर

रहेगा, किन्तु मन की साधना के लिए जीवन में एक ऐसा दीपक जलाना पड़ता है, जिस दीपक के आलोक में विनय का रत्न चमचमाता नजर आये। इस विनय के सहयोग से मन नियन्त्रण के पथ पर चल पड़ता है, इस नियन्त्रित मन के सहयोग से ब्रह्मचर्य की साधना सिद्ध होती है।

भगवान बुद्ध ने अपने प्रिय शिष्य आनन्द को सम्बोधित करते हुए कहा था– "आनन्द ! ब्रह्मचर्य के परिपाल में सुख ही सुख है"। सन्त प्रवर आनन्द भिक्षु से एक बार एक युवक ने पूछा "महात्मन् ! मैं समाज सेवा करना चाहता हूं, मेरे लिए आप कोई कोई निर्देश दें, ताकि सेवा के मार्ग से कभी विचलित न होऊँ।"

"युवक ! समाज सेवा का मार्ग कठिन है। पहले तुम अपने जीवन की सेवा करो और यदि तुम अपने जीवन की सेवा में सफल हो जाओगे, तो मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि तुम समाज सेवा कर सकोगे।" सन्त प्रवर आनन्द भिक्षु ने गम्भीरता पूर्वक कहा।

युवक ने विनम्र होकर प्रार्थना की "स्वामिन् ! मैं आपके कथन का आशय नहीं समझ पाया। यदि आप अनुग्रह पूर्वक मुझे यह बतायें कि मैं किस प्रकार अपनी सेवा करूं, तो मैं आपके एहसान को कभी न भूलूंगा।"

सन्त प्रवर ने कहा "युवक ! जीवन के निर्माण के लिए तुम अपने जीवन को ब्रह्मचर्य की भट्टी में तपाओ, यदि अपने इस प्रयास में सफल हो जाते हो, तो तुम्हारे अन्दर अनुशासन, सेवा, विनम्रता के मानवीय गुण प्रस्फुटित होने लगेंगे। और जब तुम्हारा जीवन ब्रह्मचर्य की आभा से प्रदीप्त हो उठेगा, तब तुम्हारे संकेतों पर समाज चलने के लिए तैयार हो जायेगा। ब्रह्मचर्य का पालन व्यक्ति के उत्थान में सहायक तो है ही, किन्तु साथ ही राष्ट्र के संकल्प को भी प्राणवान बनाता है।"

प्रत्येक व्यक्ति यह सुनता है कि ब्रह्मचर्य में महान शक्ति है। इसमें दो मत नहीं है कि ब्रह्मचर्य शक्ति का आगार है। ब्रह्मचर्य के पालन से आदमी की शारीरिक शक्ति बढ़ती है। यह कोई बहुत महत्त्वपूर्ण बात नहीं है। यदि मनुष्य धान खरीदता है तो धान के साथ चावल तो आ ही जाना है और साथ ही धान का छिलका भी आ जाता है। जब मनुष्य धान खरीदता है, तब उसका उद्देश्य चावल प्राप्त करना होता है, धान का छिलका खरीदना नहीं। जिस प्रकार धान के साथ छिलका अपने आप ही आ जाता है, इसी प्रकार ब्रह्मचर्य के पालन से शारीरिक शक्ति स्वतः ही प्राप्त हो जाती है। ब्रह्मचर्य के पालन से हमारी मानसिक क्षमता बढ़ती है और साथ ही आत्मिक बल भी। इस आत्म बल की प्राप्ति ही ब्रह्मचर्य की सबसे बड़ी उपलब्धि है। इस आत्मबल के

आधार पर मनुष्य समाज को एक नया रूप देता है। समाज की रचना में आत्मबली महापुरुषों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। महर्षि दयानन्द के जीवन में इसी ब्रह्मचर्य का तेजोदीप्त परिणाम देखने को मिलता हैं। ऋषि ने भारत को जो एक नयी दिशा दी, उसमें ऋषि दयानन्द के ब्रह्मचर्य का महान योगदान था। ऋषि के जीवन में ब्रह्मचर्य की क्षमताओं का अनेक रूप में दर्शन होता है। उन सब क्षमताओं के पीछे ब्रह्मचर्य प्रकाश में विकसित आत्मबल था, इसमें सन्देह नहीं है। यह आत्मबल मनुष्य को विषम से विषम पथ पर आगे बढ़ने के लिए प्रेरणा देता है। यह चरित्र का एक ऐसा आलोक मय पक्ष हैं, जिसके अभाव में मनुष्य अपने जीवन को संतुलित नहीं कर पाता है। असंतुलित जीवन मनुष्य को पतन के किस कगार पर ले ले जाकर छोड़ेगा, यह कुछ भी नहीं कहा जा सकता। इस असंतुलन को रोकने के लिए आत्मबल ही एक माध्यम है। और इस आत्मबल के मूल में ब्रह्मचर्य का आलोक अवश्य होगा। व्यक्ति का धर्म, दर्शन, मनन, चिन्तन इन सब का उन्मेष ब्रह्मचर्य के सहयोग से ही हुआ था, इसीलिए अथर्ववेद में ब्रह्मचर्य की महिमा का इस रूप में उल्लेख किया गया है कि विद्वान ब्रह्मचर्य के बल से मृत्यु को जीत लेता है।

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।

वस्तुतः ब्रह्मचर्य काल मनुष्य जीवन का अनुपम रत्न है। जो व्यक्ति इस रत्न को सुरक्षित कर लेता है, वही व्यक्ति संसार में वास्तिविक विजेता बन सकता है। विद्वानों की सभा लगी हुई थी। नर्मदा की लहरें उठ उठ कर आसमान को छूने के लिए लालायित थी। इतने में मुनि श्वेतांक ने सभा की ओर अभिमुख होकर कहा "क्या आप लोग संसार में एक विजेता के समान जीवन व्यतीत करना चाहते हैं? क्या आप जीवन के समर में कभी भी पराजित होना नहीं चाहते हैं? क्या आप अपने जीवन में समग्र सुखों को बसा लेना चाहते हैं?"

मुनिवर श्वेतांक के इस दिव्य वचन को सुनकर प्रत्येक व्यक्ति कह उठा कि महात्मन्! हम लोग आपके निर्दिष्ट जीवन का भागीदार बनना चाहते हैं। आप हमें निर्देश दीजिये, हम लोग इस दिव्य जीवन के स्वामी कैसे बनें।

मुनिवर ने कहा— "यदि आप लोग चाहते हैं कि आपके जीवन से हर प्रकार का पराजय दूर रहे, तो ब्रह्मचर्य की साधना में जीवन को ढालो। ब्रह्मचर्य की सिद्धि से शरीर के समस्त रोग विनष्ट तो हो ही जाते हैं, किन्तु साथ ही आन्तरिक शत्रु ईर्ष्या द्वेष जिनसे हम लोग प्रतिपल पराजित होते रहते हैं, उसके चुगुल से हमारा जीवन मुक्त हो जाता है।

सूरज तो केवल दिन जगती-तामस हरता है।
प्रतिपल परन्तु वेद-सूर्य मानस-तामस हरता है।।

वस्तुतः ब्रह्मचर्य राष्ट्र के विकास के लिए मन्त्र है, व्यक्ति की समृद्धि के लिए पारस मणि है, चेतना के उन्मेष के लिए तेल है और मानवता के निर्माण में एक नया अध्याय है।

बालक

प्रत्येक बालक यह संदेश लेकर संसार में आता है।
कि ईश्वर अभी मनुष्यों से निराश नहीं हुआ है।।
(रवीन्द्र)

❁ ❁ ❁

बालक राष्ट्र की मुस्कुराहट है।
(चक्रवर्ती राजगोपालाचारी)

❁ ❁ ❁

सत्य, अहिंसा का पाठ मैंने बालक से सीखा है।
(महात्मा गांधी)

❁ ❁ ❁

राजनीतिक सम्मेलनों से हमारी उलझनें कभी न सुलझेंगी। यदि इन गुत्थियों को सुलझाना है तो इसके लिए हमें बालक की शरण लेनी होगी।
(प्रेसीडेन्ट रूजवेल्ट)

❁ ❁ ❁

क्या तुम जानते हो कि बालक होना क्या है? इससे तात्पर्य है प्रेम में विश्वास करना, सौन्दर्य में विश्वास करना तथा विश्वास में विश्वास करना।
(फ्रान्सिस टामसन)

❁ ❁ ❁

बालकों की कर्त्तव्य शीलता ही सब गुणों की नींव है।
(सिसरो)

❁ ❁ ❁

[संकलक:- राजीव कुमार, अष्टम कक्षा]

महर्षि दयानन्द : राष्ट्रीय विचार-धारा

रवीन्द्र "रवि" आत्रेय व्याकरणाचार्य

Lives of great men dll remind us,
We can make our lives Sudlime
and departing leave behind us.
Foot prints on the sands of time"
[Long Fellow]

महापुरुषों के पावन जीवन शिक्षा यह देते हमें सदा।
हम भी अपने निज जीवन को तद्रूप बनायें तदा कदा॥
छोड़ जायें पद चिन्ह अपने चलते रेतीली धरणी पर।
[संन्तोष रहे प्रस्थान समय निज कर्मों पर निज करणी पर] (गुप्त)

अमावस्या की घनघोर रात में यदि पथिक जंगल में मार्ग भटक जाये, तो जो परेशानी भ्रमित पथिक के लिए हो सकती है, वही परेशानी राष्ट्रीयता शून्य व्यक्ति के जीवन में होती है। राष्ट्र यदि पुरुष है. तो राष्ट्रीयता आत्मा है। राष्ट्र यदि फूल है, तो राष्ट्रीयता सौरभ है। राष्ट्र यदि संगीत है, तो राष्ट्रीयता लय है, राष्ट्र यदि दीपक है, तो राष्ट्रीयता ज्योति है। वस्तुतः राष्ट्रीयता के बिना राष्ट्र की कल्पना नहीं की जा सकती है। प्रसिद्ध विचारक 'रस्किन' का यह विचार स्मृति पटल पर लिखने योग्य है— "अपनी राष्ट्रीयता मनोवृत्ति को शुद्ध रखो, आपकी राष्ट्रीय आंखें स्वयं ठीक हो जाएंगी।"

राष्ट्र का निर्माण चरित्रवान लोगों के द्वारा होता है। चरित्र के निर्माण के लिए व्यक्ति के जीवन में राष्ट्रीयता का समावेश अनिवार्य है। जब भारत

दुर्दिन से घिरा हुआ था, तब भी एक सूर्य मेघों को छिन्न–भिन्न करता हुआ भारत के राष्ट्रीय आकाश पर समुदित हुआ था। वह सूर्य चाहता था कि भारत के अन्दर जो अराष्ट्रीयता की अन्धकारमयी प्रवृत्ति राष्ट्र में चारों ओर फैली है, उसे उखाड़ फेकूँ। उस सूर्य का नाम था **महर्षि दयानन्द** उन्होंने पहचान लिया था कि शक्तिशाली भारत के पतन का कारण, एक मात्र भारतीयों में राष्ट्रीयता का अभाव है। भारत के सोते हुए जन मानस को झकझोरते हुए उन्होंने कहा था... ... ...

(१) कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। (सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ८ पृष्ठ १४१)

(२) माता पिता के समान कृपा, न्याय, और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है। (स० प्र० समुल्लास ८ पृष्ठ १४१)

(३) सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त चक्रवर्ती, सार्वभौम, राजा आर्यकुल में ही हुए थे। अब इनके सन्तानों का अभाग्योदय होने से विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहे हैं। (स० प्र० समु० ११, पृष्ठ १७३)

महर्षि दयानन्द ने अपने दिव्य दृष्टि से देख लिया था कि भारत के पतन में प्रमुख कारण राष्ट्रीय विचार धारा का अभाव है। कोई भी राष्ट्र राष्ट्रीयता से रहित होकर अधिक दिनों तक जीवत नहीं रह सकता है। जब ऋषि दयानन्द ने देखा कि हिन्दुस्तान का हर आदमी राष्ट्रीय विचार धारा से विमुख होकर किस प्रकार गौरव शून्य होता जा रहा है, तो ऋषि दयानन्द ने अनुभव किया कि यदि इस देश के अन्दर राष्ट्रीय भावना नहीं भरी गयी, तो रहा सहा भारत का गौरवमय अस्तित्व विलीन हो जायेगा। इसीलिए महर्षि दयानन्द ने युग निर्माता ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा... ... ...

(१) हम और आपको उचित है कि जिस के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है, आगे होगा उसकी उन्नति तन मन धन से सब मिलकर प्रीति से करें। इसलिए जैसा आर्य समाज आर्यवर्त देश की उन्नति का कारण है वैसा दूसरा नहीं हो सकता। (स० प्र० समु० ११ पृष्ठ २४५)

(२) देखो अपने देश के बने हुए जूते को कार्यालय (आफिस) और कचहरी में

नेत्र-हीन नर कभी नहीं सचमुच अन्धा होता है।
शास्त्र नयन विरहित मानव जग में अन्धा होता है॥

जाने देते हैं, इस देशी जूते को नहीं। उसमें समझ लेओ कि अपने बने देश के जूतों का भी जितना मान प्रतिष्ठा करते हैं उतना भी अन्य देशस्थ मनुष्यों का नहीं करते।

(स० प्र० समु० ११ पृष्ठ २४२)

ऋषि दयानन्द के इन शब्दों में स्वदेशी वस्तुओं के प्रति कितना आग्रह है। जो लोग आज विदेशी वेशभूषा को पहनने में गौरव अनुभव करते हैं, उन्हें ऋषि दयानन्द के इन शब्दों पर ध्यान देना चाहिए। स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग से राष्ट्र केवल धन धान्य से ही केवल सम्पन्न नहीं होता है, अपितु राष्ट्र भावनाओं के सूत्र में बँध भी जाता है। आज भारतीय समाज विदेशी वस्तुओं के उपयोग में कितना गौरव अनुभव करता है, इसके लिए प्रमाण देने की जरुरत नहीं है। क्या स्वदेशी वस्तुओं के प्रति विमुख होना और विदेशी वस्तुओं को हृदय से चिपटाये रखना राष्ट्रीयता के अभाव का परिचायक नहीं है? जब महात्मा गांधी ने इन शब्दों को लिखा होगा, उस समय उनके दिल क्या भावना भरी होगी... ... ...

"स्वदेशी का व्रत तो सदा ही पालना है द्वेष या वैर भाव से नहीं, बल्कि अपने प्यारे देश के प्रति कर्तव्य बुद्धि से प्रेरित होकर पालना होगा।" स्वदेशाभिमान शून्य आदमियों को देखकर ही राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त को लिखना पड़ा था ... ...

जिसको न निज गौरव तथा, निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं पशु है निरा, और मृतक समान है॥

जो भरा नहीं है भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है, पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं॥

राष्ट्र की सुरक्षा केवल धन अथवा शक्ति के द्वारा नहीं हो जाती है, अपितु राष्ट्र के संरक्षण के लिए मन में अतीत के प्रति प्यार हो। यह सत्य है कि केवल अतीत के गीत गाने से ही राष्ट्र का समुत्थान नहीं हो सकता है, परन्तु यह भी सत्य है कि अतीत को भुलाकर कोई राष्ट्र भी पनप नहीं सकता है। जो राष्ट्र अतीत को भुला देता है, उसका राष्ट्रीय चरित्र विकसित नहीं

यदि मन में अज्ञान निशा का अंधकार व्यापक है।
तो सूरज मन अन्धकार का न बन सकता नाशक है।।

हो पाता है। राष्ट्र सम्पदा संरक्षक महर्षि दयानन्द ने राष्ट्रीय चरित्र के विकास के लिए भारत के अतीत के विषय में लिखा– "यह आर्यावर्त्त ऐसा है जिसके सदृश भूगोल में दूसरा देश नहीं है। इसी लिए इस-भूमि का नाम स्वर्ण भूमि है, क्योंकि यही सुवर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है। .....आर्यावर्त्त देश ही सच्चा पारस मणि है कि जिसके लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूने के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।

(स० प्र० समु० ११ पृ० १७२)

"जितनी विद्या भूगोल में फैली है वह सब आर्यावर्त्त देश से मिश्र वालों, उनसे युनानी, उनसे रूम, उनसे युरोप देश में उनसे अमेरिका आदि देशों में फैली है।"

(स० प्र० पृ० १७८)

राष्ट्र वैश्वानर है।† वैश्वानर का मतलब है विश्व को आगे ले जाने वाला। वैश्वानर का शाब्दिक अर्थ अग्नि है। अग्नि में जो कुछ डाला जाता है, अग्नि उसे आकाश मंडल में फैला देती है। राष्ट्र को जो कुछ समर्पित किया जाता है, राष्ट्र भी उसे मानव समाज के कल्याण के लिए लौटा देता है। राष्ट्र की सम्पदा का संरक्षक राष्ट्रीय चरित्र होता है, यदि राष्ट्र के जीवन में राष्ट्रीय चरित्र का अभाव हो जाएगा, तो राष्ट्र लड़खड़ा उठता है। राष्ट्रीय चरित्र का मतलब है - अपनी भाषा, अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता के प्रति गौरव पूर्ण दृष्टि कोण रखना। जब इन तीनों के प्रति व्यक्ति के जीवन में संतुलन स्थापित हो जाता है, तब व्यक्ति राष्ट्र के लिए समर्पित होकर काम करता है। इनमें संतुलन स्थापित करना इसलिए आवश्यक होता है कि इनके बिना मानवीय दृष्टि कोण का विचार सम्भव नहीं है। इनका संतुलन आदमी को राष्ट्र के प्रति समर्पित होकर सामुदायिक जीवन व्यतीत करने के लिए प्रेरित करता है। सामुदायिक दृष्टि कोण का अभाव आदमी के जीवन में अनाचार के विकास में सहायक बनता है। ऋषि दयानन्द ने व्यक्ति का जीवन व्यक्तिगत किस प्रकार होना चाहिए और उसका व्यवहार समाज के प्रति कैसा होना चाहिए इस बात का संकेत ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज के दो नियमों में उल्लेख किया है– "प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

†राष्ट्रम् वै वैश्वानरः। तैत्तिरीय संहिता ५, ४, ७, ७

आभारी बन करके जीना सभी सुखों का घर है।
एहसान फरोशी से जीना पशु–जीवन से बदतर है॥

ऋषि दयानन्द के इन्हीं शब्दों में व्यक्ति का चरित्र किस प्रकार उभड़ा है? व्यक्ति को समाज के आश्रित होकर जीवन व्यतीत करना चाहिए। यदि व्यक्ति समाज के समुत्थान के लिए अपने स्वार्थ का परित्याग नहीं करता है, तो राष्ट्रीय चरित्र का विकास नहीं हो सकेगा। ऋषि दयानन्द को यह कदापि स्वीकार नहीं है कि आदमी अपने व्यक्तिगत सुख के लिए राष्ट्र के कल्याण को बलिवेदी पर चढ़ाये। ऋषि दयानन्द चाहते थे कि व्यक्ति सीमित परिवेशों को छोड़कर, उदारतामय जीवन व्यतीत करें। इसमें सन्देह नहीं है कि व्यक्ति को इस प्रकार का जीवन व्यतीत करने लिए अपनी लालसाएँ छोड़नी पड़ती हैं। यह परिवर्तन कभी कभी व्यक्ति को दुखदायक लगता हैं, किन्तु राष्ट्रीय विचार धारा में जीवन को समर्पित करने के लिए निहायत जरूरी है। निम्न पंक्तियाँ ऋषि दयानन्द के हृदय निहित उस विचार धारा की परिचायिका हैं, जिसके कारण ऋषि दयानन्द राष्ट्रीय पुरुष के रूप में सदा स्मरण किये जायेंगे।

१– भिन्न २ भाषा पृथक पृथक शिक्षा अलग अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। बिना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है। (स० प्र० समु० ८ पृ० १४१)

२– जो राजा प्रजा पालन के बिना कर लेता है, जिस राजा की प्रजा को दुष्ट जन दुःख देते हैं और जो राजा आप नीच कर्म करने वाला बाज पक्षी के सदृश हिंसक पशुओं के सदृश, मूर्ख और जिस राज्य की सेना चोर सदृश वर्तमान है उसका शीघ्र नाश होता है। (स० प्र० समु० ११)

३– जितना हिंसा और चोरी, विश्वासघात और छल, कपट आदि से पदार्थों को प्राप्त होकर भोग करना, वह अभक्ष्य है। (स० प्र० समु० १० पृ० १६८)

इन कथनों के पीछे ऋषि दयानन्द का राष्ट्रीय हृदय खुला पड़ा है। ऋषि दयानन्द ने अंग्रेजों के राज्य में भी खुलकर राष्ट्रीय विचार धारा के विषय में अपने विभिन्न ग्रन्थों में जितना अधिक लिखा है, उस युग में किसी ने नहीं लिखा। हे राष्ट्रीयता के अग्रदूत! ऋषिवर! आपके इस ओजोमय व्यक्तित्व को देखकर विश्व कवि रवीन्द्र नाथ टैगोर ने ठीक ही लिखा था–

"आलस्य और प्राचीन ऐतिहासिक तत्व के अज्ञान से मुक्त कर भारत को सत्य और पवित्रता की जागृति में लाने वाले गुरुवर दयानन्द को बार–बार प्रणाम है"

पेटू जन से आतिथेय भी प्रतिपल घबड़ाता है ।
जैसे याचक को लखकर कृपण सदा कतराता है ॥

आज भारत के आकाश मण्डल में राष्ट्रीयता का जो सूर्य प्रभासमान है, वह आपके प्रबल सकल्प का सुपरिणाम है। आपके इस राष्ट्रीय चरित्र को देखकर लाला हरदयाल एम० ए० ने ठीक ही कहा था—

"स्वामी दयानन्द ने हिन्दु युवकों के हृदय में त्याग, परोपकार और देशभक्ति की ज्योति जगा दी। हिन्दु जाति को जो धर्म शिक्षा इस समय मिली है उसका सारा श्रेय स्वामी जी को है।"

राष्ट्रीयता आपकी आत्मा थी। राष्ट्रीयता के सिन्धु में सदा निमज्जित रहने वाले हे महामानव! तुम्हारे चरणों पर मेरा बार बार नमन है। आपकी राष्ट्रीयता में उदारता का समावेश है, ओजस्विता का उन्मेष है, अतीत की झंकार है, वर्तमान का सत्कार है, और मानवीय भावनाओं का जय-जयकार है। हे ऋषिवर! यदि आपकी इस राष्ट्रीय विचार धारा में भारत सन्तरण करने लगे, तो निश्चय ही एक ऐसे मानव का निर्माण होगा; जो इन्सानियत के प्रति सदा समर्पित रहेगा।

दर्दे दिल, पासे वफ़ा, जज्बा-ए-ईमाँ होना,
आदमीयत है यही और यही इन्साँ होना।

स्वयं ही यौवन अविवेक का महाकेन्द्र होता है ।
अधिकारों का सुरा-पानकर सकल-क्षेम खोता है ॥

प्रेम

सुरनर मुनि सब की यह रीती ।
स्वारथ लागि करैं सब प्रीती ॥

(तुलसी)

* * * *

रीति प्रीति सब सों भली, बैर न हित मित गोत ।
रहिमन याही जनम की, बहुरि न संगति होत ॥

(रहीम)

* * * *

प्रेम व्यथा तन में बसे, सब तन जर्जर होय ।
राम वियोगी ना जिये, जिये तो बोरा होय ॥

(कबीर)

* * * *

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित हुआ न कोय ।
ढाई अच्छर प्रेम का, पढ़ै सो पंडित होय ॥

(कबीर)

* * * *

रहिमन गली है सांकरी दूजो ना ठहराहिं ।
आपु अहै तो हरि नहीं, हरि तो आपुन नाहिं ॥

(रहीम)

* * * *

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं ।
सीस उतारै भुईं धरै, तब पैठे घर माहिं ॥

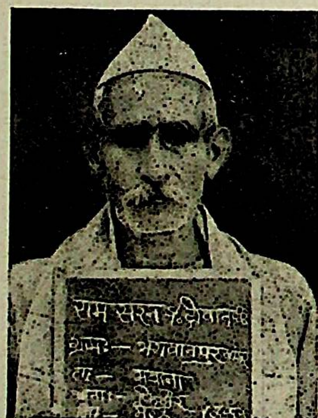
(कबीर)

* * * *

(संकलक—ब्र० शिव कुमार अष्टम कक्षा)

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर
के कर्मठ

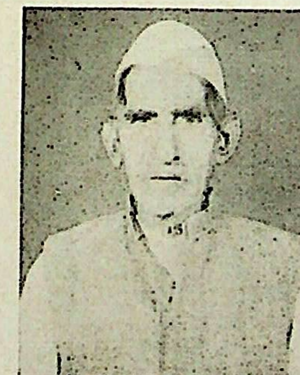
प्रधान



श्री रामशरण आर्य

व

प्रबन्धक



श्री नरपत सिंह आर्य

ब्राह्मणत्व का स्वरूप

आचार्य सोमव्रत विद्याभास्कर

भारतीय जन जीवन में वर्ण व्यवस्था का महत्व पूर्ण स्थान है। मानव की चार प्रकार की प्रवृत्तियां हैं, उन्हीं के अनुसार भारत के समाज शास्त्रियों ने चार वर्णों की कल्पना की है। मनुष्य की चार प्रवृत्तियां ये हैं— १– अज्ञान का विनाश २– अन्याय का विरोध ३– अभाव की पूर्ति ४– सेवा का प्रसार। इन्हीं चार प्रवृत्तियों के आधार पर चार प्रकार के व्यक्तित्व समाज में विकसित होते हैं। उपर्युक्त गुणों से सम्पन्न व्यक्तित्व का निरूपण इस प्रकार किया जा सकता है— १–शिक्षक २–रक्षक ३–वितरक ४–सेवक। इन सज्ञाओं को ऋषियों के शब्दों में इस प्रकार कहा जाता है— १–ब्राह्मण २–क्षत्रिय ३–वेश्य ४–शूद्र। यह विभाजन यद्यपि आज के युग में पिछड़ापन का परिचायक लगता है, किन्तु स्वभाव को ध्यान में रखकर भारतीय समाज शास्त्रियों ने इस विभाजन को स्वीकार किया है। वर्ण का अर्थ होता है चुनना (वर्ण : वृणोतेः)। जब आदमी सोचने समझने लायक होता है. उस समय मनुष्य अपनी इच्छानुसार जीवन यापन करना चाहता है। जो मनुष्य इस बात का व्रत लेता है कि वह समाज में अज्ञान को कहीं भी पेर नहीं टिकाने देगा, उस व्यक्ति को ब्राह्मण कहा जाता है।

अज्ञान मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। मनुष्य अज्ञान के कारण ही हर प्रकार का अपराध करता है। अज्ञान ही संसार में सभी विपत्तियों का एक मात्र मूल है। संसार में अज्ञान से बढ़कर दूसरा अन्धकार नहीं है। कन्फ्यूशियस का यह कथन याद करने योग्य है— "अज्ञान मन की रात्रि है, लेकिन वह रात्रि जिसमें न तो चांद है और न तारे—

मात–पिता से हीन हुआ जो वह अनाथ ना होता ।
चरित सम्पदा से विरहित जो वह अनाथ है होता ॥

Ignorance is the night of the mind but a night without Moon or Star." ब्राह्मण आग्नेय होता है। (आग्नेयो हि ब्राह्मणः। काठ २६, १०, ३७, २।) अग्नि जिस प्रकार सभी वस्तुओं को भस्म करके उन वस्तुओं को अग्निमय बना देती है, उसी प्रकार ब्राह्मण समाज के अन्दर व्याप्त अज्ञान को दूर करने के लिए सदा तत्पर रहता है, इसीलिए वह आग्नेय होता है। माध्यन्दिनीय शतपथ ब्राह्मण में ब्राह्मण को राक्षसों का विनाशक कहा है। ब्राह्मणो हि रक्षसा मपहन्ता १, १, ४, ६। मानव समाज के लिए अज्ञान ही सबसे बड़ा शत्रु है। ब्राह्मण इस अज्ञान रूपी शत्रु का हनन करता है। ब्राह्मण के पास ज्ञान का सूर्य है। ब्राह्मण अपने ज्ञान रूपी सूर्य से अज्ञान रूपी वृत्र (राक्षस) का विनाश करता है। वृत्र मनुष्य की चेतना को आच्छादित कर लेता है। ब्राह्मण के पास शौर्य का सागर होता है, तभी तो वह सम्मान को विष के समान समझता है और अपमान को अमृत के समान समझता है। मनु का ब्राह्मण के संदर्भ में यह वचन सदा स्मरणीय है –

सम्मानाद् ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत विषादिव ।
अमृतस्येव चाकांक्षेदवमानस्य सर्वदा ॥

आचार्य विनोबा भावे का यह कथन ब्राह्मण के सन्दर्भ में सदा स्मरणीय रहेगा– ब्राह्मण के माने हैं साहस की साक्षात प्रतिमा। ब्राह्मणत्व कोई जन्म जात सम्पदा नहीं थी। ब्राह्मणत्व तो सतत साधना के पश्चात् जीवन में विकसित होने वाला महान तत्व था। ब्राह्मण अपने इस अर्जित सम्पदा के कारण ही मनुष्य समाज में दिव्यता का प्रतीक माना जाता है। इस दिव्यता के सम्पादन में उसके जीवन का प्रतिपल दीपक के समान तिल तिल कर जलता रहता है, इसीलिए वैदिक साहित्य में उसे मनुष्यों के मुख रूप में चित्रित किया गया है। मुख जिस प्रकार मानव शरीर में उत्तमता का परिचायक है, उसी प्रकार ब्राह्मण भी समाज की रचना में उत्तमता का परिचायक है। ब्राह्मण राष्ट्र की वाणी है। उसकी वाणी में सत्य का संस्कार है, साधना का सत्कार है और परोपकार शीलता का शृंगार है, इसीलिए ब्राह्मण की वाणी समाज की वाणी है। वैदिक ऋषियों के सामने ब्राह्मण के विषय में विराट कल्पना थी, इसीलिए उन्होंने ब्राह्मण के जीवन के साथ वसन्त ऋतु का सम्बन्ध स्थापित किया था। वसन्त ऋतु और ब्राह्मण के साथ सम्बन्ध की जो परिकल्पना है, उसके पीछे साधना अर्जित सम्पदा का आलोक प्रभासमान है।

ठीक नहीं अपमानित होकर शत वर्षों तक जीना ।
मान सहित पल ही जियो चाहे पड़े विष पीना ।।

जिस प्रकार वसन्त ऋतु, ऋतुओं में पुष्पादि के कारण प्रशंसनीय है, उसी प्रकार ब्राह्मण भी अपने ब्राह्मवर्चसमय व्यक्तित्व के कारण नमनीय है। प्रस्तुत संदर्भ में हमें कभी यह नहीं भूलना चाहिए कि जीवन की समस्त दिव्य सम्पदा ब्राह्मण के कर्तव्यमय जीवन के आस पास घूमती रहती हैं। ब्राह्मण काँटों के ताज को पहनकर समाज के दामन को फूलों से भर देता है। वह भले ही मुसीबतों के बीच डूबता उतराता हो, किन्तु दूसरों की छलकती हुई आँखों को देखकर, उसे पोंछने के लिए अपना सर्वस्व निछावर कर देता है। वह सत्ता के खिलाड़ियों को निर्देश देता है, किन्तु सत्ता सुन्दरी उसे स्पर्श भी नहीं कर पाती है। वह संसार के कल्याण के लिए सांसारिक कोलाहलों के बीच में निरन्तर निवास करता है, किन्तु उसके मस्तिष्क में सदा न्याय का संगीत गूँजता रहता है। उसके तरकस में एक से एक बढ़कर तीर होते हैं, किन्तु साथ ही विनम्रता साथ रहती है। वह एक एक शब्दों को तोलकर बोलता है, क्योंकि उसके शब्दों में अपार शक्ति है, जो राष्ट्र को विकम्पित कर सकती है। यह ब्राह्मण जिसके सकेतों पर राष्ट्र का जनमानस नाच उठता है, तो क्या वह विकास के के परम शिखर पर पहुँचकर अभिमान की खाई में नहीं गिर पड़ेगा? यह प्रश्न बार बार मन में आन्दोलित होता है। ब्राह्मण का आदर्श सोम है।[1] इसी लिए उसके उसके जीवन में अभिमान का सवाल ही नहीं उठता है। सौम्य स्वभाव होना ब्राह्मणत्व का जीवन मूल्य है।[2] यदि वह इस जीवन मूल्य से वञ्चित हो जाता है, तो वह अज्ञान की दीवारों को गिराने में समर्थ नहीं हो सकेगा। अज्ञान की दीवारों को गिराने के लिए निरन्तर शान्ति के शिखर पर विद्यमान रहना पड़ता है। किसी प्रकार का आवेश मनुष्य को पतन की खाई में क्षण भर में ही गिरा सकता हैं। ब्राह्मण तो समाज निर्माण के पथ का दावेदार है। वह तो समाज के अन्दर एक ऐसा दीपक प्रज्वलित करना चाहता है, जो भीषण से भीषण तूफान के बीच में न बुझ सके। वह संसार में इस प्रकार का सामाजिक चेतना का विस्तार करना चाहता हैं, जिससे आगे आने वाली पीढ़ी आलोकित हो सके। वह एक ऐसी दिव्य द्वार का निर्माण करना चाहता है, जिस द्वार से गुजर कर प्रत्येक व्यक्ति जीवन के महल में प्रवेश करके आनन्द ले सके। आप जरा तहेदिल से सोचिये तो सही जिसके जीवन में,

१– सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानां राजा। मैत्रायणी संहिता ४/४/३
२– सौम्यो वै ब्राह्मणो देवतया। मैत्रायणी संहिता। १/६/५

अनासक्ति गर जीवन में दुख का फिर कुछ काम नहीं।
हिमकर के उगने पर जैसे टिक पाता है घाम नहीं।।

प्रतिपल मुक्त चिन्तन जन्म लेता है, जिसके जीवन में प्रतिक्षण समाज के कल्याण के लिए करुणा का संगीत गूंजता रहता है, जिसके जीवन में शान्ति के प्रेरक महाप्रभु सोम का पावन दीपक जलता रहता है; भला उस व्यक्ति के मानस को अभिमान की चिन्गारी छू सकती है ? क्या उस व्यक्ति के हृदय में सम्प्रदायों का सागर लहर सकता है ? क्या उसे राजनीति का बवन्डर उड़ा सकता है ? वस्तुतः ब्राह्मण प्रतिपल अपने व्रतों का पालन करता है, इसीलिए तो वह समाज में व्रतों के परिपालक नाम से प्रसिद्ध है।[1]

सुगन्धियों से लिपटा हुआ फूल किसको आकृष्ट नहीं कर लेता है ? कपूर के सुवास से सुवासित वातावरण किसे विमुग्ध नहीं कर लेता है ? लय में बंधा हुआ छंद किसके मन को भावनाओं के ससार में विहरण करने लिए स्वच्छन्द नहीं कर देता ? वस्तुतः ब्राह्मणत्व इस वसुन्धरा पर दिव्य जीवन का प्रतीक है। उसका जीवन दिव्यता का परिचायक है। वह अपने जीवन को महत्वाकांक्षाओं के अभिशाप से अभिशप्त नहीं होने देता है। वह इस बात को भली भाँति जानता है कि उसका अवतरण मानव भूमि पर आलोकमय जीवन व्यतीत करने के लिए हुआ है। ब्राह्मण का प्रत्येक पल मानवीय विकास के लिये समर्पित है, इसीलिए उसका प्रत्येक व्यवहार चेतना के आस पास आलोकित होता रहता है। भले ही उसे तूफानों के बीच गुजरना पड़े, किन्तु वह समझता है कि जीवन का उद्देश्य शारीरिक सुख के सरोवर में स्नान करना नहीं है। गौरव पूर्ण जीवन के संदर्भ में वालटर स्काट का यह दिव्य वचन हमें सदा स्मरण रखना पड़ेगा—

"गौरव पूर्ण जीवन का एक व्यस्त घंटा कीर्ति रहित युगों से कहीं अधिक महत्व पूर्ण है। One Crowded hour of Glorious life is worthan age without a name."

यही उसके जीवन का एक छोटा सा परिचय है। जब भी कोई व्यक्ति इस विषय पर विचार करेगा, तब उसे ऐसा अनुभव होने लगता है कि मानवता का वह कौन सा सुरभित सुमन है; जो ब्राह्मणत्व की डालो पर न खिलता हो ? विवेक का समस्त चिन्तन ब्राह्मणत्व के तेजोमय स्वरूप के सामने अपने को पंगु अनुभव करने लगता है। चेतना का इन्द्र धनुषी आकर्षण उसके चरण रज को अपने माथे पर लगाने के लिए लालायित हो उठता है।

जब भी कोई व्यक्ति राष्ट्र की समृद्धि की ओर देखेगा, तो उसे उस समय

१– ब्राह्मणो व्रतभृत्। तैत्तिरीय संहिता १/६/७/२

आमन्त्रित जन का सर्वत्र सदैव समादर होता।
बिना निमन्त्रित मानव निज सम्मान सुधा को खोता।।

ऐसा लगेगा कि इस समृद्धि के पीछे एक ऐसा व्यक्तित्व समर्पित है, जिसके पास तन ढकने के लिए कपड़ा भले ही नहीं; किन्तु संसार की व्यथाओं को दूर करने के के लिए उसके पास धड़कता हुआ दिल है। उस दिल में ममत्व का विस्मरण है, करुणा का आभरण है और सत्य का आचरण है। यदि उसके पास कोई कामना कभी ठहर पाती है, तो उस कामना में समाज के कायाकल्प का आयोजन अवश्य दृश्यमान होगा। वह सर्वस्व त्याग करना तो जानता है, किन्तु वह आत्म प्रदर्शन की कला से अपरिचित होता है। इसीलिए तो समाज उसके इस दिव्य जीवन के प्रति विमुग्ध है।

वेद बिन्दु

१. **बोधश्च त्वा प्रतिबोधश्चावताम्** † अ० ८-१-१३ † बोध (ज्ञान) प्रतिबोध (विज्ञान) तुम्हारे रक्षक बने।

२. **जीवास्थ जीव्यासम्** † अ० १९ ६९-१ † संसार में तुम भी जियो और मैं भी जिऊँ।

३. **आकूतिः सत्यामनसो मे अस्तु** † ऋ० ५-३-४ † मेरे मन का संकल्प सत्य हो।

४. **सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः** † यजुर्वेद † यजमान की कामनाएँ पूर्ण हों।

५- **मा नो मर्ता अभिद्रुहन्** † ऋ० १-५-१० † मानव परस्पर द्वेष न करे।

— [संकलक ब्र० शील भद्र]

राष्ट्र चमन का अध्यापक हो एकमात्र माली है।
बिन उसके सहयोग न कोई खिल पाती डाली है ।।

पुष्प

पुण्य संवर्द्धनाच्चापि पापौघ परिहारतः !
पुष्कलार्थं प्रदानाच्च पुष्पमित्यभिधीयते !!

फूल पाप समूह को दूर करते हुए पुण्य की अभिवृद्धि करता है तथा प्रचुर अर्थ को प्रदान करता है, इसीलिए वह पुष्प नाम से पुकारा जाता है।

न रत्नैर्न सुवर्णेन न वित्तेन च भूरिणा !
तथा प्रसादमायाति यथा पुष्पैर्जनार्दनः !!

भक्तजनों के ऊपर कृपा रखने वाले भगवान प्रचुर रत्नराशि अथवा सुवर्ण के खजाने से भी उतने प्रसन्न नहीं होते जितने भक्तों के दिये पुष्पों के समूह से।

अहिंसा प्रथमं पुष्पं द्वितीयं करणग्रहः,
तृतीयकं भूतदया चतुर्थं शान्तिरेव च !
शमस्तु पञ्चमं पुष्पं ध्यानं चैव तु सप्तमम्,
सत्यं चैवाष्टमं पुष्पमेतैस्तुष्यति केशवः !
एतैरेवाष्टभिः पुष्पैस्तुष्यते चार्चितो हरिः
पुष्पान्तराणि सन्त्येव बाह्यानि नृपसत्तम !

अहिंसा पहला, इन्द्रियसंयम दूसरा, जीवों पर दया करना तीसरा, क्षमा चौथा, शम पांचवां, दम छठां, ध्यान सातवां और सत्य आंठवां पुष्प है। इन पुष्पों के द्वारा भगवान् संतुष्ट होते हैं। नृप श्रेष्ठ ! अन्य पुष्प तो पूजा के बाह्य अंग हैं, भगवान उपर्युक्त आठ पुष्पों से पूजित होने पर प्रसन्न होते हैं।

[संकलक—ब्र० ज्ञानेन्द्र पाल, अष्टम कक्षा]

कभी न अस्त होने वाला सूरज

नेकपाल वेदार्थी, विज्ञान प्रवक्ता

तुम क्या चाहते हो ?

मैं शक्ति चाहता हूँ ।

तुम शक्ति क्यों चाहते हो ?

मैं शक्ति को इसलिए चाहता हूँ कि मेरे अन्दर जो व्यक्ति छिपा हुआ है, उसे जानना चाहता हूँ ।

तुम उस व्यक्ति को पहचान कर क्या करोगे ?

यदि मैं अपने अन्दर के व्यक्ति को पहचान लूंगा, तो मेरे जीवन के अन्दर जो चेतना का अनन्त सागर लहर रहा है, उसे मैं एक अभिव्यक्ति दे सकूंगा । मैं उसे पहचान न पाया, इसीलिए तो मैं दुखी हूं ।

यदि तुम अपने अन्दर निहित व्यक्ति की शक्ति को एक नयी अभिव्यक्ति दे दोगे, तो क्या तुम अपने जीवन में कौन सा ऐसा परिवर्तन अनुभव करोगे ?

जब मनुष्य को अपनी अन्तर् निहित शक्तियों का समुचित ज्ञान हो जाता है, तब उसका जीवन धर्ममय हो जाता है । धर्म मानव जीवन की सर्वोत्तम उपलब्धि है । इसीलिए मैं आपके सहयोग से अपनी शक्ति को पहचानना चाहता हूँ ।

मानवता का सकल मूल ही वेद विभा भासित है ।
वेद ज्ञान बिन ना हो पाता जीवन अनुशासित है ॥

तुङ्गभद्रा के तट पर पर महामुनि विजय सूरि के साथ विनय मोहन का वार्तालाप इस प्रकार चल रहा था। विजय सूरि को विनय मोहन की इस जिज्ञासा को जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ।

जीवन में जो कुछ शुभ है, यदि आप उसे नहीं जगाते हैं, तो अशुभ का साम्राज्य धीरे धीरे जीवन में व्याप्त हो जाता है। इसीलिए आपके जीवन में जो शुभ है, उसे जगाने के लिए निरन्तर प्रयास कीजिए। जीवन में शुभ के जागरण के लिए धर्म का आश्रय लेना पड़ता है, जो मनुष्य धर्म का आश्रय लेता है; उस मनुष्य के जीवन में मानवीय गुणों का विकास होने लगता है। धर्म के सन्दर्भ में चीन के प्रसिद्ध विचारक कनफ्यूशियस का प्रस्तुत विचार हमें अपने ध्यान में सदा रखना चाहिए — "गम्भीरता, उदारता, विश्वस्तता, तत्परता, तथा दयालुता का व्यवहार ही सच्चा धर्म है।" धर्म मानव के जीवन के लिए अनिवार्य क्यों है? यदि यह प्रश्न आपके मन में कभी तरंङ्गित हो उठे, तो आप उस समय ऋग्वेद के इस प्रेरक वचन को अपनी स्मृति में अवश्य रखियेगा; ताकि आपकेजीवन को एक नयी दिशा मिल सके "सत्य की नौका धार्मिक मानव को पार लगाती है—सत्यस्य नावः सुकृतमपीपरन्।" यह धर्म मानव जीवन के सुखों का संग्रह करने वाला है। यदि आप चाहते हैं कि आपके जीवन में मानवता का सुविकास हो, तो आपको अपने जीवन में धर्म को स्थान देना ही पड़ेगा। वस्तुतः यह धर्म ही तो मानव के जीवन में करुणा के फूल को खिलाता है, स्नेह के वातावरण को विकसित करता है, सद्भावनाओं को सहारा देता है, जीवन को यज्ञमय बनाता है और जीवन का प्रत्येक आकर्षण जीवन के इर्द गिर्द धर्म के कारण घूमने लगता है। वस्तुतः यह गुणों का संग्राहक है, दुर्गुणों का विनाशक है, आदर्शों का संस्थापक है सदाशयता का परिचायक है। यह शंकर के समान अज्ञान असुर का संहार कर्त्ता है, यह विष्णु के समान सद्गुणों का परिपालक है, यह ब्रह्मा के समान जीवन महल का निर्माता है, यह कृष्ण के समान अन्याय का विरोधी है, यह राम के समान मर्यादा का पालक है। धार्मिक व्यक्ति कभी भी अन्याय के साथ समझौता नहीं कर सकता है, क्योंकि वह प्रतिपल अनुभव करता है कि यदि वह अन्याय को एक बार आश्रय दे देगा, तो अन्याय का वटवृक्ष निरन्तर बढ़ता ही रहेगा। इसलिए वह प्रतिपल धर्माचरण में लगा रहता है। यदि कभी आपका मन कुतर्कों से विचलित होने लगे, तो आप उस समय फ्रेंकलिन के इस वचन को बार बार दोहराइयेगा—"धर्म होने पर जब मनुष्य इतने नीच हैं, तो धर्म न होने पर वे क्या होंगे

If men are so wicked with religion, What would they be without it."

सौरभ बिन सुमन का जीवन जग में व्यर्थ कहाता।
वेद बिना मानव का जीवन पशुता पर बढ़ जाता।।

आपने कभी यह भी सोचा है कि यदि आप जीवन में धर्म को स्थान नहीं देंगे, तो यह जीवन किस रूप में बदल जायेगा। मनुष्य नरक की यातना तो सह सकता है, किन्तु अधार्मिक व्यक्ति को समाज में प्रतिपल अपमान सहना पड़ता है, वह अपमान की ज्वाला आदमी को जीवन भर जलाती रहती है और व्यक्ति इस असह्य वेदना को अकेला ही तड़पता हुआ सहता है। आप इस नारकीय वेदना से बच सकें, इसीलिए अपने जीवन की भूमि में धर्म के बीज को आज से बोना शुरू कर दीजिए। यदि आपने जीवन को धर्ममय बनाने के लिए निश्चय कर लिया है, तो आपके जीवन में एक ऐसी सुगन्धि व्याप्त हो जायेगी, जो हर आदमी को अपनी ओर आकृष्ट करेगी। मुझे विश्वास है कि आप इस गौरवशाली जीवन के अवश्य भागीदार बनेंगे। आप प्रतिपल यह ध्यान रखियेगा कि गौरवशाली जीवन का भागीदार बनना ही मानवता का विजय घोष है।

यदि आप एक बार धर्म के पवित्र मन्दिर में पहुँच जाते हैं, तो आप अपनी जिन्दगी के महत्व को पहचान सकेंगे। उस मन्दिर में पहुँचने के पश्चात् आदमी की जिन्दगी में एक नयापन पैदा हो जाता है और वह दुनिया की हर चीज को एक नयी रोशनी में देखता है जिन्दगी में जो इतना अधिक अन्धकार है, उसका एक मात्र कारण धर्म के मन्दिर में न पहुंचना है। आदमी आदमी से इसलिए लड़ रहा है कि उसके जीवन में धर्म का प्रकाश नहीं पहुँच पा रहा है। धर्म विहीन आदमी के हाथ में यदि कोई अधिकार आ जाता है, तो वह उसका दुरुपयोग करता है। धर्म आदमी को सिखाता है कि अपने जीवन को नेक बनाओ, परन्तु अपनी नेकी पर अभिमान मत करो, धन कमाओ किन्तु किसी को सताओ मत; दान करो किन्तु उसका प्रचार मत करो। आप जैसे ही धर्म के मन्दिर में प्रवेश करेंगे, मनु का यह वचन आपके जीवन का अवश्य पथ प्रदर्शन करेगा—

"धार्मिक व्यक्ति के जीवन में धैर्य, क्षमा, दंम, चोरी न करने की भावना, पवित्रता इन्द्रियनिग्रह विवेकशीलता, विद्या, सत्य और अक्रोध की भावना मिलती है।"

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

आप जरा सोचिए तो सही, जिस क्षण मनु के द्वारा बताये हुए धर्म के ये दस रत्नदीप आपके जीवन को आलोकित करने लगेंगे, वह क्षण कितना आनन्ददायक होगा? यह सम्भव है कि रत्नों का दीप कभी बुझ जाये, किन्तु मनु के द्वारा निर्दिष्ट ये धर्म दीपक कभी भी नहीं बुझते हैं। धर्म के इस दीपक को आप सदा अपने जीवन में जाग्रत रखें।

संस्कृति के संस्कारों से नर-जीवन सुरभित होता ।
उसके बिन मानव का जीवन कलह क्लेशमय होता ।।

यदि आप धर्म के इस निरन्तर प्रभासमान दीपक को जागृत न रख सकेंगे, तो एक दिन आपको यह अनुभव होगा कि आप धन, ज्ञान, शक्ति से घिर कर भी इस संसार में अकेले ही हैं। सूर्य निकल कर अस्त हो जाता है, किन्तु धर्म का सूर्य कभी भी अस्त नहीं होता। क्या आप कभी भी न अस्त होने वाले सूर्य की उपेक्षा करना पसन्द करेंगे ?

आप यह कभी नहीं भूलियेगा कि यह संसार उगते हुए सूर्य को नमस्कार करता है, खिलते हुए फूलों से प्यार करता है, चमकते हुए चन्द्रमा का सत्कार करता है। जिसके जीवन में धर्म का सूर्य समुदित हो उठा है, धर्म का फूल मुस्करा उठा है, धर्म का चन्द्र चमचमा उठा है, उसी का समाज सत्कार करता है, प्यार करता है, नमस्कार करता है। यदि आप भी समाज के सम्मान का भागीदार बनना चाहते हैं, तो आपको अपने जीवन में धर्म का दीपक जलाना ही पड़ेगा।

वेदामृत

१. **आरोह तमसो ज्योतिः** ❋ अथर्व ८–१–८ ❋ अन्धकार से हटकर प्रकाश की ओर चल।

२. **नेह भद्रं रक्षस्विने** ❋ ऋग्० ८–४७–१२ ❋ संसार में राक्षसीवल कल्याणकारक नहीं है।

३. **अधमस्तु अधकृते** ❋ १०–१–५ ❋ बुराई करने वाला बुरा होता है।

४. **आदेवानामपि पथामगन्म** ❋ ऋ० १०–२–३ ❋ हम लोग सदा देवताओं के मार्ग का अनुकरण करें।

५. **प्रति पन्थामपद्महि स्वस्तिगाम नेहसम्** ❋ यजु० ४–२८ ❋ हम लोग पाप रहित कल्याणकारी मार्ग पर चलें।

[—संकलक ब्र० वेद कुमार दशम कक्षा]

नीम के गुण

— अरुणपाल आत्रेय विद्यारत्न
(गुरुकुल चिकित्सालय अधिकारी)

आयुर्वेद में नीम का बहुत महत्त्व है। यह गुणकारी और कीटाणु नाशक है। लोग इसके उपयोग को नहीं जानते, इसीलिए नीम से लाभ नहीं उठा पाते हैं। नीम का फल जो कि निबोली के नाम से जाता है। जब यह पक जाता है, तब इसे यदि खाया जाये, तो फोड़े फुन्सियाँ नष्ट हो जाती हैं और खाज खुजली आदि चर्म रोग भी नष्ट हो जाते हैं। यदि निबोली का तेल कीड़े लगे दांतों में लगाया जाये, तो दांत के कीड़े नष्ट हो जाते हैं। नीम के तेल से पायरिया नामक दाँतों के रोग में यदि इस तेल को दातों पर मालिश की जाय तो बहुत लाभ होता है।

नीम का पत्ता बहुत उपयोगी होता है। नीम के स्पर्श मात्र से वायु में व्यापक कीड़े नष्ट हो जाते हैं। यदि इन पत्तों को सुखाकर ऊनी, रेशमी आदि कपड़ों में रख दें, तो कपड़े कीड़े मकाड़ों से सुरक्षित रहते हैं। यदि कोई फोड़े फुन्सियों से परेशान है, तो उसे नीम की हरी पत्तियों को पानी में उबालकर नित्य स्नान करना चाहिए। नीम की सूखी पत्तियों को जलाकर और उसका पाउडर बनाकर वैसलीन के अन्दर मिला कर यदि मुख पर मला जाये, तो कील मुहासे आदि धब्बे मिट जाते हैं और चेहरे पर निखार आ जाता है।

नीम का दातून भी बहुत लाभदायक है छोटे बच्चों के पेट में जो कीड़े हो जाते हैं उनको निकालने के लिए नीम के लाल लाल पत्तों के रस को निकालकर शहद के साथ मिला कर चटा देना चाहिए। फोड़ों पर नीम के पत्तों की पुल्टिस बांधने से बहुत लाभ होता है। वस्तुतः नीम हमारे जीवन के लिए बहुत उपयोगी है।

त्रिविध-ताप-मुक्ति

जब मलयाचल का शीतल सुरभित समीर बहता है, तब तन का ताप मिट जाता है और जब वैदिक ऋचाओं का दिव्य पवन जीवन में बहने लगता है, तब मन त्रिविध ताप से मुक्त हो जाता है।

[संस्कृति के दीप]

शास्त्र सरिता

चाणक्य-सूत्र-सुधा

केशवदेव शर्मा
– विद्यारत्न

सुखस्य मूलम् धर्मः ॥१॥ धर्मस्य मूलम् अर्थः ॥२॥ अर्थस्य मूलम् राज्यम् ॥३॥ राज्य-मूलम् इन्द्रियजयः ॥४॥ इन्द्रिय-संयमस्य मूलम् विनयः । ५॥ विनयस्य मूलम् वृद्धोपसेवा ॥६॥ प्रकृति–कोपः सर्व–कोपेभ्यः गरीयान् ॥७॥ सम्पद्यात्मानम् अन्विच्छेत् सहायान् ॥८॥ नाऽसहायस्य मन्त्रनिश्चयः ॥९। सहायः समः दुःख-सुखयोः ॥१०॥

सुख का मूल धर्म है ॥१॥ धर्म का धन है ॥२॥ धन का मूल राज्य है ॥३। राज्य का मूल धर्म है–इन्द्रियों पर संयम । यदि राजा संयमी नहीं है, तो वह विषयों के पथ पर चलकर राज्य को विनष्ट कर डालेगा ॥४॥ इन्द्रियों के संयम का मूल विनय है । विनय-शील इन्द्रियों को संयमित कर सकता है ॥५॥ विनय का मूल विद्वानों की सेवा है । विद्वानों के निर्देश के अनुसार चलने से जीवन में विनय की वाटिका महक उठती है । वृद्ध विद्वानों की सेवा जीवन को विनीत और पुनीत बनाती है ॥६॥ प्रजा का कोप सभी कोपों से भयंकर है ॥७॥ राजा सोच समझ कर अपने मन्त्री आदि सहायकों का चयन करे ॥८॥ इन सहायकों के अभाव में समुचित विमर्श नहीं हो पाता । एक चक्के से गाड़ी नहीं चलती, इसी प्रकार राजा अकेले अपने बल बूते पर राज्य का संचालन नहीं कर सकता ॥९॥ अनुकूल सहायकों का चयन सुख–दुख में सहायक होता है ॥१०॥

* * * * *

वेद का अवतरण

वेद का अवतरण मानव भूमि पर तुम्हारे लिए हुआ है, ताकि तुम्हारा जीवन फूल सा खिल उठे, तुम्हारे प्राणों में संगीत गूंज सके, तुम्हारा हर शब्द मानवता के लिए समर्पित हो सके । तुम एक दिव्य जीवन के स्वामी बन सकते हो, यदि तुम्हारा हर पल वैदिक साध के लिए समर्पित हो जाये ।

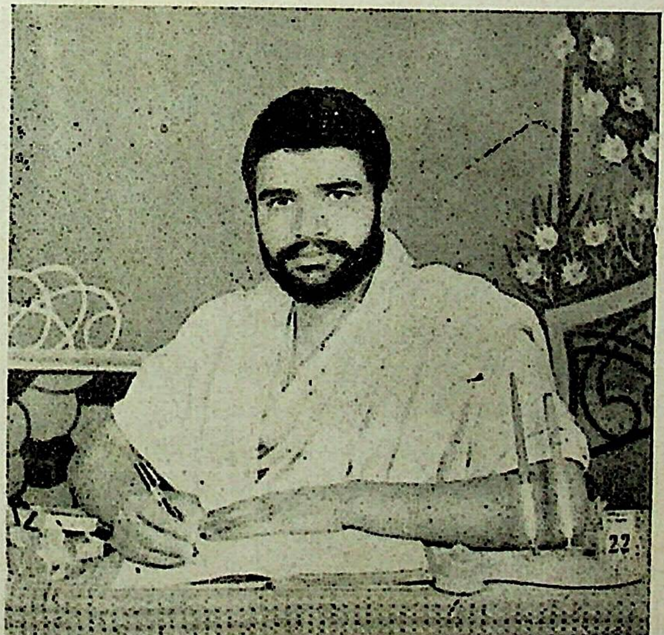
[संस्कृति के दीप]

❀ ओ३म् ❀

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर

के

आचार्य



श्री धर्मपाल आर्य विद्याभास्कर

बागवाँ बिन चमन लुट गया

महेन्द्रपाल सिंह उपाध्याय ए०ए०

यह संसार मनुष्य के लिए परीक्षास्थल है। वही मनुष्य इस विश्व में सफल हो सकता है, जो अपने स्वरूप को पहचानता है। आदमी के सामने दो बातें स्पष्ट रूप से होनी चाहिएँ। पहली बात तो यह है—रूप और दूसरी बात है - स्वरूप! मनुष्य की मोटी पहचान यही है कि वह रूप और स्वरूप के विभाग को समझ सके। आदमी का जीवन रूप के चक्कर में ही समाप्त हो जाता है और वह स्वरूप को नहीं समझ पाता है। जिस प्रकार प्रकाश के बिना सूर्य का कुछ भी महत्व नहीं है, जिस प्रकार सौरभ के बिना सुमन का अस्तित्व व्यर्थ है, जिस प्रकार लय के बिना संगीत महत्व हीन है; उसी प्रकार यदि मनुष्य के जीवन में स्वरूप का बोध नहीं है तो निश्चय ही रूप का सागर मनुष्य के लिये कोई भी महत्व नहीं रखता है। जैसे ही मनुष्य को अपने स्वरूप का बोध होता है, उसी क्षण मनुष्य के जीवन से विरोध दूर हो जाता है। आज हमारे जीवन में जो विरोध की भयकर आंधी उठ रही है, उसका एक मात्र कारण यही है कि आज हमारे जीवन में स्वरूप का बोध नहीं है। केवल रूप के पीछे भागना अन्धापन है। अन्धा व्यक्ति ही इधर-उधर टकराता फिरता है क्योंकि उसके पास दृष्टि नहीं है। दृष्टि के अभाव में कोई भी नयी सृष्टि नहीं हो सकती है। रूप का अर्थ है बाहरी संसार। बाहरी संसार को हम आंखों से देखते हैं। इन आंखों से आदमी केवल बाहर की वस्तुओं को ही देख सकता है, किन्तु हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि जीवन में जो कुछ भी महत्वपूर्ण है, वह सब आंखों से नहीं दिखलाई पड़ता है। मनुष्य डाली पर खिले हुए फूल को देखता है। वह फूल कितना सुन्दर लगता है, उस फूल की सुगन्धि मन को खींच लेती है, किन्तु फूल का रूप और सौरभ ही सब कुछ नहीं है। फूलों का पेड़ जड़ों के कारण हरा भरा है। जड़े जमीन के अन्दर ही फैलकर रसों को खींचती हैं और उन रसों को फूलों तक पहुंचा देती हैं; इसीलिए तो फूल इतना मन मोहक बन पाता है। जिस आदमी की दृष्टि फूल के इस बाहरी रूप रंग पर टिक जाती है, वह आदमी उन जड़ों को नहीं देख सकेगा, जो फूलों के विकास में परम सहायक है।

नदियों के मार्ग में कितनी भी बाधाएँ आयें, किन्तु नदियाँ उन बाधाओं को धकेलती हुई अन्त में सागर तक पहुँच जाती हैं। सागर तक पहुंच जाना ही नदियों का जीवन है।

भाषाएँ तो बहुत जगत में पर संस्कृत अनुपम है।
जैसे ऋतुओं में वसन्त ही कहलाता उत्तम है ॥

मनुष्य यदि जीवन में सुख शान्ति चाहता है, तो उसे अपने स्वरूप को समझना ही पड़ेगा, अन्यथा उसके जीवन का समस्त सुख धूल में मिल जायेगा। जो आदमी अपने स्वरूप को समझ लेता है, वही जीवन के वास्तविक अर्थ को जानता है। जीवन का आनन्द उसी व्यक्ति के हिस्से में आता है, जो प्रत्येक व्यक्ति के प्रति सहयोग की भावना रखता है। जीवन का अर्थ है "सहयोग करना" जो आदमी सहयोग की भावना से भर जाता है, उसके जीवन में एक नया दृष्टि कोण पैदा हो जाता है और वह समझने लगता है कि मैं इस प्रकार का जीवन व्यतीत करूँ, जिससे मानवता का गौरव बढ़े, राष्ट्र का संकल्प समृद्ध हो और आत्मा का दीपक प्रदीप्त हो उठे। यही है मनुष्य जीवन का स्वरूप । और जब इस स्वरूप का चोला वाला हमारे जीवन के उपवन में हो जाता है, तब जीवन का उपवन की प्रत्येक डाली पर रूप का मन मादक सुरभित सुमन खिल उठता है। इन्हीं फूलों का नाम है हमारे जीवन में करुणा, दया, क्षमा स्नेह, सहयोग, शालीनता आदि। इन्हीं के कारण मनुष्य और पशु में अन्तर किया जाता है। यदि हमारे जीवन में करुणा का फूल नहीं खिलता है, सहयोग का संगीत नहीं गूँज उठता है, दया का दीपक नहीं जल उठता है, स्नेह की सरिता नहीं उमड़ पडती है; तो निश्चय ही आदमी का जीवन पशुता की सीमा को पार कर जाता है। पशु केवल रूप को देखता है, इसीलिए वह पशु है (पश्यति केवलं रूपम् इति पशुः)। और जब आदमी अपने स्वरूप से विहीन होकर सांसारिक चकाचौंध में फँस जाता है, तब वह नारकीय जीवन को बिताने लगता है। यह नारकीय जीवन यदि व्यक्ति के लिए केवल अभिशाप होता, तो बहुत हानि की बात नहीं थी। यह नारकीय जीवन तो आदमी के सुख को विनष्ट करता ही है, किन्तु साथ ही राष्ट्र को भी विषमय कर देता है। मनुष्य अपना और राष्ट्र का कल्याण चाहता है, तो उसे जीवन में सहयोग शील बनना पड़ेगा।

प्रातः काल की बहती ठन्डी हवाएँ मनुष्य के साथ सहयोग कर रहीं हैं। चमकता हुआ सूरज संसार को प्रकाश देकर सहयोग कर रहा है। मेघ बरस कर पृथ्वी को हरा भरा कर देता है। मनुष्य को भी राष्ट्र के जीवन को गौरव शाली बनाने के लिए, राष्ट्र के लिए समर्पित जो कल्याण कारिणी संस्थाएँ हैं; उन संस्थाओं के, उन व्यक्तियों को, जिन्होंने परोपकार के लिए अपने जीवन को समर्पित कर दिया है; हमें उन लोगों के साथ सदा सहयोग करना चाहिए। यदि हम राष्ट्र के समर्पित व्यक्तियों के साथ सहयोग नहीं करते हैं, तो निश्चय ही असमय मे विकास रुक जाता है। और इस विकास के रुक जाने का मतलब है आदमी के जीवन में अज्ञान के बादलों का मंडराना। ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार, निन्दा ये सब अज्ञान के परिणाम हैं। सहयोग हमारे जीवन के अज्ञान को दूर करता है

और जीवन के उपवन को महकते हुए फूलों से भर देता है। यही धार्मिक जीवन का वास्तविक स्वरूप है । हमें केवल अपने स्वार्थ पर ही ध्यान नहीं रखना है, अपितु स्वार्थ के साथ ही साथ परार्थ का भी ध्यान रखना है। जब व्यक्ति के जीवन में परहित की भावना पैदा हो जाती है, तब जीवन आत्मसंयम, शुभ भावना और कल्याण का केन्द्र विन्दु बन जाता है। परहित के लिए उदारता पूर्वक अपने ज्ञान, अपने धन को समर्पित करना मानव के सौभाग्य का स्वर्ग द्वार है। वस्तुतः इस भूमण्डल पर उदारतामय जीवन ही स्वर्ग है, अमृत है, आनन्द का खजाना है। इस आनन्द के खजाने को प्राप्त करने के लिए ही मनुष्य दरबदर घूमता है, किन्तु वह मनुष्य सुखों तक पहुँच नहीं पाता है। यही तो एकमात्र वशीकरण मन्त्र है। यदि आदमी अपने धन का सदुपयोग नहीं कर पाता है, तो एक दिन उसका धन उसे स्वयं ही विनष्ट कर देगा। विक्टर ह्यूगो ने ठीक ही लिखा है—ज्यों ज्यों धन की थैली दान में खाली होती है दिल भरता जाता है। प्रस्तुत संदर्भ में हमें अथर्ववेद के इस दिव्य वचन को सदा याद रखना चाहिये— " हे मनुष्य सैकड़ों हाथों से धन कमाओ और उस धन को हजारों हाथों से बाँट दो— शतहस्त समाहर सहस्रहस्त संकिर ।" यदि कभी आपके दिल में दान के विषय में किसी कारण न देने की भावना पैदा होती है, तब आप उस समय कालिदास के इस प्रेरक वचन को अवश्य बार बार दोहराइये—"जिस प्रकार बादल पृथ्वी से जल लेकर फिर उस जल को पृथ्वी पर बरसा देते हैं, सज्जन मनुष्य भी जिस वस्तु को ग्रहण करते हैं फिर उसे परोपकार के लिए दान रूप में लौटा देते हैं—

आदानं हि विसर्गाय सतां वारिमुचामिव ।"

प्रत्येक मनुष्य चाहता है कि उसके जीवन में देवत्व का अवरण हो, किन्तु आदमी के जीवन में दानवत्व का अवतरण होने लगता है। देव सदा अपने जीवन की प्रत्येक वस्तु को समाज के लिए समर्पित करते रहते हैं, इसीलिए उनके जीवन से ईर्ष्या द्वेष समाप्त हो जाते हैं। उनके जीवन में विश्व बन्धुत्व का भाव जग जाता है। दानव समाज के लिए कुछ भी नहीं करता है और अपने स्वार्थ के लिए ही जीता है, इसीलिए वह ईर्ष्या द्वेष, निन्दा चुगली के तट पर घूमता रहता है "वस्तुतः मनुष्य के अन्दर देव और दैत्य निरन्तर निवास करते हैं। देव दिव्य भावनाओं से भरा रहता है और दैत्य तोड़ने फोड़ने में लगा रहता है—देव दैत्यौ मनुष्येषु, निवसतो निरन्तरम् । दिव्य-भावमयो देवो, दैत्यः खण्डन-तत्परः ।" हम लोग जीवन में दैत्य न बन जायें, इसीलिए निरन्तर अपनी सामर्थ्य के अनुसार अपने धन में से कुछ न कुछ परोपकार के लिए देते रहें। यदि हमारे पास धन नहीं हैं; तो जो व्यक्ति राष्ट्र के लिए समर्पित होकर परोपकार के लिए काम कर रहे हैं, उन्हें

अगर जानना चाहे कोई नर-मन की अभिलाषा ।
उसे सुनिश्चित पढ़नी होगी अनुपम संस्कृत-भाषा ।।

प्रेरक वचनों के द्वारा प्रोत्साहित करें, यह भी दान का सर्वोत्तम रूप है । यदि हम किसी को न धन दे सकते हैं, न सहानुभूति दे सकते हैं, न सहयोग दे सकते हैं, तो आप उस क्षण सावधान होकर अपने हृदय में उस राक्षस को ढूँढियेगा, जो आपके जीवन से सहानुभूति, सहयोग, दान की दिव्य भावना को आपसे छीनना चाहता है । यदि आपके जीवन से ये मानवीय सम्पदायें विनष्ट हो जायेंगी, तो फिर आपके पास क्या बचेगा ?

यही है जीवन में स्वबोध का मतलब है और यदि स्वरूप का यह बोध नहीं हो पाता है, तब आदमी के जीवन में एक ऐसी आग भड़कती है, जो बुझाये नहीं बुझती है । आदमी एक ऐसा मन्दिर बनाता है, जिसमें ईंट पत्थर के सिवा कुछ भी नहीं रहता है । इन्सान के कदम उस ओर चल पड़ते हैं, जहाँ पर केवल कब्रिस्तान हैं । आदमी एक ऐसी हालत में पहुंच जाता है, जहाँ उसे छल छद्म के सिवा और कुछ अच्छा नहीं लगता है । यह सब इसीलिए होता है कि आदमी के पास स्वरूप का ज्ञान नहीं रह पाता है और जब स्वरूप का बोध विलीन हो जाता है, तब जीवन से सहयोग समाप्त हो जाता है । और जैसे ही सहयोग समाप्त होता है. जीवन में दानव जाग उठता है । यदि आप चाहते हैं कि यह दानव न जागे, तो दान के देवता से, सहयोग के सौरभ से सहानुभूति के संगीत से अपने जीवन महल के कोने-कोने को भर लीजिए । यही आपके जिन्दगी रूपी चमन का सच्चा रक्षक है आप अपने इस रक्षक को मत भूलिए और यदि आप इसे भूल गए, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि कहीं आंपको भी अन्त में यह न कहना पड़े 'बागवाँ बिन चमन लुट गया ।"

दर्शन और दार्शनिक

[संकलक ब्र० विनोद कुमार विद्यावाचस्पति]

फलसफी की बहस के अन्दर खुदा मिलता नहीं ।
डोर को सुलझा रहे हैं और सिरा मिलता नहीं ।।

—अकबर

Queen of arts and daughter of heaven. तत्वज्ञान कलाओं की रानी और स्वर्ग की बेटी है ।

—बर्क

गुरुकुल
महाविद्यालय
ततारपुर

'अध्यापक वर्ग'

बांयें से दायें:—
सर्वश्री—सोमव्रत आचार्य
धर्मपाल आर्य (प्राचार्य)
महेन्द्रपाल आर्य
खड़ हुए—नेकपाल आर्य
रवीन्द्र 'रवि' आत्रेय
रामलाल आर्य



दैवी सम्पदा का दावेदार

—रामलाल शास्त्री विद्याभास्कर

मानव के जीवन में संस्कारों का महत्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य जीवन में अच्छा अथवा बुरा जो कुछ भी करता है। वह सब संस्कारों से प्रेरित होकर करता है। भगवान कृष्ण ने सोचा कि यदि किसी प्रकार महाभारत का युद्ध टल जाये, तो बहुत ही अच्छा होगा। यह प्रश्न उनके मन में बार-बार गूँज रहा था, किन्तु कोई मार्ग नहीं सूझ पा रहा था। भगवान कृष्ण ने अन्त में सोचा कि दुर्योधन कर्ण के बल पर उछल रहा है। यदि मैं कर्ण को अपने पक्ष में करलूँ तो सम्भव है, दुर्योधन युद्ध से विमुख हो जाये। वे जब कर्ण को समझाने के लिए जा रहे थे, तब उनके मन में अचानक यह विचार उठा कि क्यों न एक बार फिर दुर्योधन से मिल लिया जाये, भगवान कृष्ण दुर्योधन के पास पहुँचे और उन्होंने कहा कि हे दुर्योधन! ये पाण्डव तुम्हारे भाई हैं। आखिर राज्य पर इन लोगों का भी तो अधिकार है। तुम इन्हें इतना भूखण्ड दे दो, जिससे पाण्डव जीवन का निर्वाह कर सकें। इस प्रकार कौरवों और पाण्डवों में सद्भावना बनी रहेगी।

दुर्योधन भगवान कृष्ण की बातों को ध्यान पूर्वक सुनता रहा और अन्त में उसने भगवान कृष्ण के प्रति निवेदन किया—" हे कृष्ण। मैं यह अच्छी प्रकार से जानता हूँ कि पाण्डवों के प्रति मेरा किस प्रकार का धर्ममय व्यवहार होना चाहिये किन्तु मैं इस धर्म को जानकर के भी इस धर्ममय कार्य में प्रवृत्त नहीं हो पा रहा हूँ। मैं यह भी अनुभव करता हूँ। कि मेरा यह व्यवहार अधर्ममय है, फिर भी मैं इस अधर्ममय व्यवहार से बच नहीं पा रहा हूँ। मेरा हृदय स्थित संस्कार मुझे जैसा प्रेरित करता है, मैं वैसा ही करने लगता हूँ।"

जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः, जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः।
संस्कार मात्रेण हृदिस्थितेन, यथानियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।

सुन्दर भविष्य निर्माण हेतु बिन अतीत का संभव ।
बिना हिमालय क्या गंगा का हो सकता है उद्भव ।।

दुर्योधन के उत्तर को सुनकर भगवान कृष्ण निराश हुए । उन्होंने सोचा एक बार कर्ण से मिल लिया जाय । श्री कृष्ण कर्ण के पास पहुँचे । कर्ण ने भगवान कृष्ण का हर्ष पूर्वक स्वागत किया और इस असमय में आने का कारण पूछा । भगवान कृष्ण ने गम्भीरता पूर्वक कहा—" कर्ण । तुम्हारे जीवन के विषय में एक ऐसा रहस्य है, जिसको कि केवल कुन्ती जानती है अथवा मैं जानता हूँ । मैं आज उसी रहस्य के उद्घाटन के लिये तुम्हारे पास आया हूँ । कर्ण तुम वस्तुतः कुन्ती के पुत्र हो । तुम अविवाहित कुन्ती से उत्पन्न हो गए थे । कुन्ती लोक लाज वश तुम्हें कहीं छोड़ आयी थी और राधा ने तुम्हारा पालन किया । तुम युद्ध में भाग ले रहे हो । युद्ध में चाहे तुम मारे जाओ अथवा पाण्डवों से एक कोई मारा जाये, इससे कुन्ती को बेहद दुख होगा । आखिर तुम कुन्ती के ही तो वंश हो । कर्ण ! तुम पाण्डवों के पक्ष में आ जाओ । पाण्डव तुम्हें बड़े भाई होने के नाते युद्ध में विजयी होने के बाद सम्राट बना देगें । युद्ध में पाण्डवों की जीत निश्चित है ।"

भगवान कृष्ण की बातों को सुनकर कर्ण ने कहा—" हे कृष्ण । मैं अपने धर्म को अच्छी प्रकार समझता हूं । यदि मैं धर्म को छोड़ना भी चाहूँ, तो भी मैं धर्म को नहीं छोड़ सकता । अधर्म क्या है ? मैं इसे भी भली भांति जानता हूं किन्तु मैं अधर्म विषयक कार्य में प्रवृत नहीं हो सकूंगा । हृदय में विराजमान मेरा संस्कार मुझ जैसा प्रेरित करता है, मैं वैसा ही कर रहा हूँ ।"

जानामि धर्मं न च मे निवृत्तिः, जानाम्यधर्मं न च मे प्रवृत्तिः
संस्कार मात्रण हृदिस्थितेन, यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि ।

ये दो चित्र हैं, जो मानव जीवन के अन्दर संस्कारों का कितना महत्वपूर्ण स्थान है' इसकी ओर संकेत कर रहे हैं । आदमी अगर चाहे, तो अपने जीवन को संस्कारों के द्वारा बदल सकता है संस्कारों से सुसंस्कृत जीवन ऐसा ही जीवन है, जसे कोई व्यक्ति फूलों को तोड़कर गुलदस्ता बना ले । यद्यपि गुलदस्ता देखने में बहुत छोटा होता है और उसमें गिने चुने ही फूल होते हैं, तथापि गुलदस्ता जहाँ पर होता है, वहाँ की रौनक बढ़ जाती है । आदमी भले ही धन धान्य ज्ञान सम्पन्न हो और यदि वह कुसंस्कारों के जंजाल से घिरा हुआ है, तो उसका जीवन ऐसा ही जीवन होगा,

इच्छा हिंडोले में बैठा नर कभी नहीं खुश होगा ।
काँटों की शय्या पर सोकर भला कभी सुख होगा ।।

जिस प्रकार फूलों से भरा हुआ उपवन हो, किन्तु चारों ओर काँटे बिखरे हों। घासें उगआई हों, झाड़ झंखाड़ इधर उधर पड़ा हो। संस्कार के मर्म को समझने वाले विद्वान को इसीलिए जय घोष करना पड़ा था—

जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते ।

प्रत्येक मनुष्य जन्म से शूद्र है अर्थात् उसका जीवन खाली स्लेट के समान है, जिसमें अभी कुछ लिखा नहीं गया है। द्विज शब्द का अर्थ है दुबारा जन्म (द्वि= दुबारा ज= जन्म) माता-पिता आचार्य के सुप्रयत्न से बालक के जीवन में धीरे-धीरे गुणों का विकास होगा है। इस विकसित जीवन का नाम द्विज जीवन है बालक एक बार अपनी माँ से उत्पन्न होता है, फिर वह विद्यादि संस्कारों से सम्पन्न होकर द्विज कहलाता है।

संस्कारों का प्रमुख उद्देश्य है, मनुष्य एक ऐसे जीवन का मालिक बने, जिसका अनुकरण प्रत्येक व्यक्ति कर सके। मनुष्य जीवन में कुछ न कुछ अनुकरण करता ही है, किन्तु जब व्यक्ति का मन सुसंस्कृत हो उठता है, तब वह सौहार्द, क्षमा, दया आदि मानवीय गुणों से अपने जीवन को गुणों से भर सकेगा। मनुष्य इस गौरवशाली जीवन का मालिक किस प्रकार बने, इन्हीं बातों का विधायक संस्कार है। भारतीय शास्त्रों में सोलह संस्कारों का जो विधान किया गया है, उसके पीछे यही भावना है कि मनुष्य इन संस्कारों के माध्यम से लोक और परलोक दोनों को सुधारने में समर्थ हो सके—

वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैर्निषेकादिर्द्विजन्मनाम् ।
कार्यः शरीर संस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च ।।

(मनुस्मृति २.२६.)

सुसंस्कृत जीवन मानवता के विकास में सहायक हो सकता है, इस दृष्टि को ऋषियों ने मन में रखकर संस्कारों का विधान किया था। यदि मनुष्य सुसंस्कृत जीवन का मालिक नहीं बन पाता है तो मनुष्य के जीवन में केवल शारीरिक विकास तो हो जाता है, किन्तु मानसिक और आध्यात्मिक विकास से व्यक्ति वञ्चित हो जाता है। इन विकासों से वञ्चित होने का मतलब है, जीवन में राक्षसी प्रवृत्तियों

को प्रोत्साहन देना । मनुष्य के जीवन में तीन बातें प्रमुख होती हैं, जिनके कारण इन्सान आसुरी प्रवृत्तियों से बचकर दैविक सम्पदा का स्वामी बन पाता है । ये तीन बातें हैं—१. कृति २. प्रकृति ३. संस्कृति । आदमी जब किसी कार्य को करता है, तब वह कार्य आदमी की कृति (रचना) बन जाती है और जब आदमी बार-बार कृति को करने लगता है, तो एक दिन वही कृति प्रकृति (स्वभाव) के रूप में बदल जाती है । कृति मनुष्य का स्वभाव है । मनुष्य खाली नहीं बैठ सकता है । वह कुछ न कुछ करता ही रहेगा । क्योंकि निरन्तर किसी न किसी कार्य में लगे रहना मानव चेतना का स्वभाव है । कार्य करना ही पर्याप्त नहीं होता है, अपितु आदमी जब किसी कार्य को करे, उस कार्य में कुछ न कुछ प्रकर्ष की भावना अवश्य निहित होनी चाहिए, इसी बात की ओर संकेत करने के लिए कृति शब्द के पूर्व में 'प्र' उपसर्ग जुड़ा हुआ है । कहने का आशय यह है कि जब भी आदमी किसी कृति (कार्य) को बार-बार करेगा, तो वह कृति मनुष्य की प्रकृति (स्वभाव) बन जायेगी । इसीलिए कार्य करते समय यह ध्यान रखना पड़ेगा कि वह कार्य उत्तमता का परिचायक हो, अन्यथा मनुष्य बुरे स्वभावों का मालिक बन जायेगा । बुरे स्वभावों के मालिक बनने का अर्थ है जीवन में आसुरीय प्रवृत्तियों को निमन्त्रण देना, जो कि मनुष्य को अभीष्ट नहीं है ।

प्रकृति और संस्कृति का समीप सम्बन्ध है । समाज के द्वारा मानव की प्रकृति को जब निश्चित दिशा मिलती है, तब यही प्रकृति धीरे-धीरे संस्क्रति के रूप में परिवर्तित हो जाती है । संस्कृति के निर्माण के लिए संस्कारों का योगदान महत्व-पूर्ण है । जिस प्रकार बीज से फल बनता है, उसी प्रकार संस्कार से संस्कृति निर्मित होती है । भारतीय संस्कृति में मानवीय गुणों का जो अत्यधिक समादर है, उसका कारण ऋषियों द्वारा प्रवर्तित संस्कार विधान है । हमारे सोलह संस्कार मानव जीवन के भौतिक धरातल को विकसित तो करते ही हैं, किन्तु साथ ही मानसिक और आध्यात्मिक संस्कार की ओर भी बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं । जब मनुष्य संशय के बादलों से घिर जाता है, अथवा कुविचारों का धुंआ मनुष्य के वैचारिक चक्षु युगल को घेरने लगता है अथवा अनैतिकता का अन्धकार जब जीवन के पटल पर छाने लगता है; उस समय मानव का शुभ संस्कार उसे बचाता है । यदि हम

अधिकार सुरा नर जग में पी कौन न पागल होता ?
वर्षा में नदियों का जल क्या, निज-सीमा में होता ?

लोग गौरवशाली जीवन का मालिक बनना चाहते हैं, यदि हम लोग दैवी सम्पदाओं का दावेदार बनना चाहते हैं, यदि हम लोग जीवन को फूलों से भी अधिक सुगन्धित बनाना चाहते हैं, यदि हम लोग अपने जीवन को चन्द्रमा से भी अधिक धवलिम बनाना चाहते हैं, यदि हम लोग जीवन को पूजा से भी अधिक पावन बनाना चाहते हैं; तो हमें संस्कारों के सौरभ से जीवन को मंडित करना पड़ेगा। भारतीय संस्कार जीवन के ज्योतिमय क्षणों के परिचायक हैं, मानवीय भावनाओं के विधायक हैं, सद्‌गुणों के प्रदायक हैं; जीवन में यदि ज्योतिमय क्षणों को देखना चाहते हैं, तो आपको संस्कार के उपवन में प्रवेश करना ही पड़ेगा। आप एक बार संस्कारों के सुमनों के पास जाकर के देखिये तो सही, आपका प्रत्येक रोम दिव्य संगीत को अनुभव करेगा।

प्रार्थना

न्याय का हम दीप लेकर, विश्व में बढ़ते रहें।
कर्त्तव्य पालन के लिए, नैराश्य-पथ तजते रहें।
संसार के दुःख दैन्य को, मिल हरे हम सर्वदा।
अभिमान से बचकर चलें, कीर्ति जिसमें हो सदा॥

× × × ×

सच ही हमारा हो विभव, ईश ! यह विश्वास हो।
संयम-सुधा का पान ही, यह हमारी आश हो।
सन्तोष के तट पर सदा, हम सभी का वास हो।
शुभ-स्नेह-सरिता-स्नान में सर्वदा मधु हास हो॥

— ब्र० दिनेशचन्द्र

* यज्ञ और दक्षिणा *

— पण्डित रामनारायण आयुर्वेदाचार्य

१. अजातो ह वै तावत् पुरुषो यावन्न यजते, स यज्ञेनैव जायते।

[जैमनीयोपनिषद् ब्राह्मण ३–३–४–८]

पुरुष जब तक यज्ञ नहीं करता है, तब तक वह पुरुष नहीं बन पाता है। यज्ञ-शीलता से पुरुष निर्मित होता है।

२. नाऽदक्षिणेन यज्ञेन यजेत। [काण्वीय शतब्राह्मण २–२–१–१८]
दक्षिणा-हीन यज्ञ नहीं करना चाहिए।

३. चतस्रो वै दक्षिणाः। हिरण्यं गौर् वासोऽश्वाः। [माध्यन्दिनीय शतपथ ब्राह्मण ४–३–४–७] दक्षिणा देने के चार प्रकार हैं
१. सोना २. गो ३ वस्त्र ४. अश्व।

४. दक्षिणा वै यज्ञानां पुरोगवी। [ऐतरेय ब्राह्मण ६–३५] दक्षिणा यज्ञ को आगे बढ़ाती है।

५. तस्माद् ऋत्विग्भ्य एव दक्षिणा दद्यान्नानृत्विग्भ्यः। [माध्यन्दिनीय शतपथ ब्राह्मण ४–३–४–५] इसीलिए जो ऋत्विजों को ही दक्षिणा देनी चाहिये। जो ऋत्विज नहीं हैं, उन्हें दक्षिणा नहीं देनी चाहिये।

६. यज्ञ आयुष्मान्त्स दक्षिणाभिः। [तैत्तिरीय संहिता २–३–१०–४] दक्षिणा-युक्त यज्ञ सफल होता है।

७. विच्छेत्स्यन्ते वा अदक्षिणा यज्ञाः। [जैमनीय ब्राह्मण २–११६] दक्षिणा-विहीन यज्ञ नष्ट हो जाते हैं।

८. यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म। [कठक संहिता ३०–१०] प्रत्येक श्रेष्ठ कर्म का नाम यज्ञ है।

चिन्तन बिन मानव का जीवन पशु समान हो जाता ।
पाप-पन्थ पर चलकर फिर वह बार-बार पछताता ।।

---

९. यज्ञो वै देवानामात्मा । [कौषीतकि ब्राह्मण २५–११] देवताओं की आत्मा यज्ञ है ।

१०. यज्ञमाहुर् भुवनस्य नाभिम् । तैत्तिरीय संहिता ७–४–१८–२] संसार की नाभि यज्ञ है ।

११. दक्षिणा-घस्मरो मर्त्यः, संयाति वेदनालयम् ।
पुण्य-क्षीणाद् महा-दुःखं, निषेवते निरन्तरम् ।।

१२. संघटकात्मको यज्ञो, विद्या-कीर्त्यादिवर्धकः ।
यो नित्यं कुरुते यज्ञं, समश्नुते स वैभवम् ।। स्फुटक ।।

* सदाचार-महिमा *

सदाचार में सुखदाता । शुभ विवेक संयम उपजाता ।।
विनय-सुमन पादप हरषाता । शान्ति-सुफल प्रतिपल विकसाता ।।
करुणा-मेघ सुप्रेरक है यह । धर्म-पताका धारक है यह ।।
शील-शशी का आभूषण यह । न्याय-यती का संरक्षक यह ।।

सदाचार सा जगत में, और न कोई रत्न ।
इसीलिए इसके लिए, सज्जन करता यत्न ।।

कौन महा-सुख भाई ! जग में । सदाचार ना विलसे उसमें ।।
राष्ट्र-सुरथ इस पर चलता है । सकल नियम इस पर चलता है ।।
चन्दन सा यह सदा महकता । सूरज सा यह सदा चमकता ।।
सभी गुणों का यह दाता है । इसको पा नर हरषाता है ।।

सदाचार का इसीलिए, मनुज करे सम्मान ।
इसके बिन सुख है नहीं, यह बुधजन अनुमान ।।

ब्र० कृपाल सिंह (क्रीडा अध्यक्ष)

चतुर्मुख ब्रह्मा

ब्र. सुरेशचन्द विद्यावाचस्पति
उपप्रधान आर्य कुमार परिषद्

आदमी के मन में यह विचार सदा गूंजता रहता है, वह संसार में महानता के पथ पर बढ़ता रहे। केवल कल्पना करने से ही कोई आदमी महान् नहीं बन जाता है। महान् बनने के लिए आदमी को निरन्तर सत्संग के बीच में रहना पड़ता है। सत्संग मानव जीवन के लिए कितना अनिवार्य है यह प्रमाणों की अपेक्षा नहीं रखता है। जब सूर्य निकलता है; तब अन्धकार अपने आप दूर हो जाता है। सूर्य को कि वह प्रकाशमान है इस बात को साबित करने के लिए कोई प्रमाण नहीं देना पड़ता है। सत्संग की महिमा से प्रभावित होकर महापुरुषों ने लिखा है—

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला इक अंग।
तुलै न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सतसंग।।

× × × ×

विनु सतसंग विवेक न होई। रामकृपा विनु सुलभ न सोई।।

× × × ×

सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परसि कुधातु सुहाई।।

—तुलसीदास

× × × ×

कबिरा सगत साधु की ज्यों गंधी का बास।
जो कुछ गंधी दे नहीं तौ भी बास सुबास।।

× × × ×

कबिरा संगत साधु की हरै और की व्याधि।
संगत बुरी असाधु की आठों पहर उपाधि।।

× × × ×

कबिरा खांई कोट की, पानी पिवे न कोय।
जाय मिलै जब गंग में, सब गंगोदक होय।। —कबीर

प्रेरणा शहीदों से यदि हम नहीं लेंगे,
तो ढलते हुए जीवन की साँझ हो जायेगी।

सत्संगशील व्यक्ति का जीवन संसार में सबसे अलग ही होता है। उसे न तलवारों की धार डरा सकती है, न धन का अम्बार झुका सकता है, न रूप का सागर उसे बहा सकता है। वह तो निरन्तर सत्संग के पवित्र सागर में तैरता रहता है। सत्संग ही उसके जीवन का मनोरंजन बन जाता है। सत्संग ही उसके लिए अनुशासन का प्रेरक बन जाता है। इस प्रकार जो व्यक्ति प्रति पल सत्संग रूपी महल में रहता है उसे कब भला हीरे-जवाहरात का अम्बार खींच सकेगा। हीरे-जवाहरात का अम्बार तामसिक और राजसिक गुणों से भरे हुए इंसान के दिल को खींचने में समर्थ हो सकता है, परन्तु जिसका दिल सत्संग के कारण सात्विकता से भर उठा है, उसके सामने ये सारी चीजें तुच्छ हैं। वह भला इन तामसिक-राजसिक बन्धनों में बन्धना क्या जाने। अगर वह कभी बँध सकता है तो केवल सात्विक गुणों के तागे से ही बँध सकता है। सत्संगशील व्यक्ति के जीवन में आत्मा की आवाज गूँजती रहती है, जो व्यक्ति आत्मा की आवाज को सुनने के लिए तैयार हो जाता है, उस व्यक्ति के प्रत्येक शब्द में एक ऐसा ओजमय स्वर गूँज उठता है जिस स्वर की उपेक्षा बड़े-बड़े महाराजा भी नहीं कर सकते हैं। सिंहासन उस व्यक्ति के पैर चूमने में गौरव अनुभव करता है। यही कारण है कि महाबली सम्राट दशरथ भी विश्वामित्र की इच्छाओं का तिरस्कार न कर सके। वाल्मीकि की उंगलियों पर अयोध्या का साम्राज्य नाच रहा था। आखिर यह क्या बात थी जिसके कारण अयोध्या का साम्राज्य एक ऐसे व्यक्ति के संकेत पर नाचता था जिसके पास कोई सेना नहीं थी। यह सत्संग का प्रभाव था जिसके कारण उनका जीवन इतना महान बन गया था कि कोई व्यक्ति उपेक्षा करने का साहस नहीं कर सकता था। "सत्संगति बुद्धि की जड़ता को दूर करती है, वाणी में सत्य का संचार करती है, मान बढ़ाती है, पापों को विनष्ट करती है, हृदय को सदा प्रसन्न रखती है और चारों दिशाओं में मनुष्य के यश को फैला देती है। मुझे तुम बताओ यह सत्संग मनुष्य के कल्याण के लिए क्या-क्या नहीं करता है।"

वीरों की पूजा यदि हम नहीं करेंगे।
तो सच कहता हूँ वीरता भी बाँझ हो जायेगी ॥

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं मानोन्नति दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्ति, सत्संगतिः कथय किन्न करोति पुंसाम् ॥

—भर्तृहरि

सत्संगशील मनुष्य अपनी जीवन सम्पदा की रक्षा कर सकता है। मनुष्य जीवन की सम्पदा है—दया, क्षमा, करुणा, मुदिता, मैत्री आदि मानवीय गुण। यदि मनुष्य सत्संगशील नहीं है तो जीवन में दुर्गुणों का अम्बार लग जायेगा। सत्संग के कारण मानव का जीवन विमलताओं का केन्द्र बिन्दु बन जाता है। इसके कारण आदमी एक ऐसा जीवन जीता है, जहाँ केवल मानवता का ही निवास हो सकता है। उसके आसपास सद्गुणों की सुगंधि बिखरती रहती है। वह काँटों के बीच में भी जाकर फूलों को चुन लेता है। ब्रह्मा पुराणों में चतुर्मुख के नाम से प्रसिद्ध है, उसकी सत्ता के विषय में कोई भी आदमी मतभेद जाहिर कर सकता है परन्तु सत्संग ही वस्तुतः संसार में चतुर्मुख ब्रह्मा है। करुणा, मुदिता, मैत्री, उपेक्षा ये चारों सत्संग रूपी ब्रह्मा के मुख हैं। मनुष्य को सदा सुखमय जीवन व्यतीत करने के लिए करुणा मुदिता मैत्री जीवन प्रयोग करना चाहिये और अवगुणों के प्रति उपेक्षा भाव रखना चाहिए तभी इसान जीवन में सफलता के परम शिखर को स्पर्श कर सकेगा।

"वस्तुतः इस पृथ्वी पर सत्संग सभी दुखों को हरने वाला है, दुर्गुणों का नाशक है और समुन्नति का विकाशक है। सज्जन यदि नीचों के साथ रहता है तो वह उनके स्वभावों से प्रभावित हो जाता है क्या काजल को छूने मात्र से हाथ काला नहीं हो जाता है ?"

वसुधायां हि सत्संगः, सकल-खेद नाहरः।
दुर्गुणानाञ्च संहर्ता, विकाशकः समुन्नतेः ॥

× × × ×

नीचानां सहवासेन, सज्जनो याति लाघवम्।
कज्जल-स्पर्श-मात्रेण, कृष्ठातां याति नोकरः ॥

भारतीय संस्कृति

ब्र० नरेन्द्र कुमार
विद्यारत्न

यूनान-मिस्र-रोमा सब मिट गये जहाँ से ।
अब तक मगर है बाकी नामो-निशां हमारा ।
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी ।
सदियों रहा है दुश्मन दौरे-जमां हमारा ।

—इकबाल

भारतीय संस्कृति विश्व के इतिहास में अमर है । इस संस्कृति की विशेषताएं मनुष्य के मन को विमुग्ध कर लेती हैं । भारतीय संस्कृति में मानव की उचित कामनाओं का समादर है । व्यक्ति जब भारतीय संस्कृति के स्वरूप पर विचार करता है, तब उसे ऐसा लगता है कि वह जो कुछ चाहता था, वह तत्व इस संस्कृति में विद्यमान है । महात्मा गाँधी ने ठीक ही लिखा है—"मेरी यह दृढ़ मान्यता है कि हमारी संस्कृति में जैसी मूल्यवान् निधियाँ हैं, वैसी किसी दूसरी संस्कृति में नहीं हैं। हमने उन्हें पहचाना नहीं है, अपने आचरण में सांस्कृतिकता का व्यवहार तो हमने लगभग छोड़ ही दिया है ।"

भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ो विशेषता है आध्यात्मिकता और भौतिकता का समन्वय । इस समन्वय के कारण प्राचीन भारत उन्नति के शिखर पर था । कोई भी राष्ट्र इन दोनों तत्वों की उपेक्षा करके ससार में सफल नहीं हो सकता है । इसीलिए भारतीय संस्कृति का मार्ग सदा मध्यम मार्ग रहा है । संक्षेप में भारतीय संस्कृति की अग्र विशेषताए हैं—

वही प्रेम गंगा यहाँ फिर बहेगी।
जो संसार की तापमाला हरेगी ॥

धर्म की प्रधानता—भारतीय संस्कृति धर्म प्रधान है। धर्म मनुष्य को पशुता से बचाता है और मानवीय गुणों को जीवन में बसाता है। धर्म के कारण इंसान का दिल करूणा से भर जाता है। करूणाशील आदमी संसार के प्रत्येक व्यक्ति में आत्म दर्शन करता है, इसीलिए तो किसी के दुख को देखकर अनुभव करने लगता है—

> ख़ंजर चले किसी पै तड़पते हैं हम 'अमीर'।
> सारे जहाँ का दर्द हमारे जिगर में है ॥ —अमीर

× × ×

सम्यक् दृष्टि—सम्यक् दृष्टि के कारण मानव जीवन के वास्तविक रूप को समझ पाता है। आदमी की जैसी दृष्टि होती है, आदमी की सृष्टि भी वैसी हो जाती है। संसार में कोई व्यक्ति हमारा दुश्मन नहीं है। भारतीय संस्कृति आदमी को यह संदेश देती है कि इंसान हर आदमी के अन्दर गुणों को देखे। जब आदमी दूसरों में गुणों को देखने लगता है, तब उसके जीवन में सम्यक् दृष्टिकोण उत्पन्न होता है। सम्यक् दृष्टिकोण के उत्पन्न होते ही उसे इस बात का ज्ञान हो जाता है कि उसे भौतिक वस्तुओं पर अभिमान नहीं करना चाहिए। क्योंकि—

> फूल ऐ बुलबुल न फूलों पर दो रोजा है बहार।
> एक झोंके में हवा सब रंगो बू हो जायगा ॥ —अमीर

त्यागमय जीवन—भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषता है त्यागमय जीवन। आदमी त्यागमय जीवन से अपने जीवन को सुखमय बनाने में सफल हो जाता है। इंसान को परिश्रम करने के पश्चात् जो कुछ भी उपलब्ध होता है, उस उपलब्ध वस्तु का उपभोग अनाशक्ति भाव से करे। किसी के वैभव के प्रति ललचायी आँखों से न देखे—

> 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्'
> (यजु० ४०–१)

भारतीय सन्त कबीर ने भी लिखा है—

> मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।
> तेरा तुझको सौंपते, क्या लागे है मोर ॥

× × ×

(प्रेरणा ४०)

कहेगा जगत् फिर से एक स्वर में सारा।
वही वृद्ध भारत गुरु है हमारा ॥

कर्ममय जीवन—वेद का आदेश है कि यदि मनुष्य संसार में सुख चाहता है, तो वह प्रतिपल कर्म करते हुए जीने की इच्छा करे—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविशेत् शतं समाः ।

मनुष्य जो कुछ भी करता है वह अनाशक्त भाव से करे तो जीवन में दुख नहीं होता ,। इसी कर्ममय जीवन की ओर भारतीय संस्कृति संकेत करती है। जब इंसान कर्त्तव्य भाव से कर्म करता है, तब आदमी अनावश्यक बातों से बच जाता है और वह धीरे-धीरे यह समझ जाना है कि कर्त्तव्य भावना से प्रेरित कर्म सभी दुखों का विनाशक है। इस कर्म की महिमा में ही कबीर को लिखना पड़ा था—

एक कर्म है बोना उपजै बीज बहूत।
एक कर्म है मूंजना उदय न अंकुर सूत ॥

× × × ×

वर्ण व्यवस्था—वर्ण व्यवस्था भारतीय संस्कृति की अमर देन है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ये चार वर्ण हैं। ब्राह्मण समाज में ज्ञान-विज्ञान का प्रसार करता था। क्षत्रिय राष्ट्र की रक्षा करता था। वैश्य समाज को धन-धान्य से परिपूर्ण करने का प्रयास करता था। शूद्र चूंकि वह पढ़ नहीं पाता था, इसीलिए वह तीन वर्णों की सेवा में अपना सारा समय लगा देता था। मनुष्य के स्वभाव के अनुसार वर्णों का यह वैज्ञानिक विभाजन भारत के लिए रामबाण सिद्ध हुआ। जब भारत वर्ण व्यवस्था के कर्म मूलक स्वरूप को भूलकर, जन्म मूलक व्यवस्था को मानने लगा, तब भारत जांत-पांत के चक्कर में पड़कर पतन की खाई में जा गिरा।

आश्रम व्यवस्था—आश्रम व्यवस्था भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण देन है। ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य आश्रम में पच्चीस वर्षों तक तप-मय जीवन व्यतीत करता है। फिर वह गृहस्थ आश्रम में पचास वर्ष की उम्र तक रहता है। गृहस्थ के पश्चात् व्यक्ति को साधनामय जीवन व्यतीत करने के लिए ७५ वर्ष की उम्र तक उसे वानप्रस्थाश्रम में रहना पड़ता है। फिर जो व्यक्ति संसार के कल्याण करने में समर्थ होता है, जो राग द्वेष से शून्य हो जाता है फिर वह सन्यासाश्रम में चला जाता

चाह-चमन की रौनक सचमुच बड़ी मधुर होती है।
इसमें फँसकर मानव की शुभ-बुद्धि मलिन होती है।।

है। इस आश्रम में पहुँचकर मनुष्य तेरे-मेरे पन की भावना से मुक्त हो जाता है और सारे संसार को अपना परिवार समझने लगता है—

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसामम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

× × × ×

भारतीय संस्कृति विशेषताओं का मणिमाल—आकाश में चमकते हुए तारों को कौन गिन सकता है? भारतीय संस्कृति के आकाश-मण्डल में विशेषतारूपी अनेक तारे हैं इस संस्कृति में कर्मवाद का सिद्धान्त मनुष्य को सन्देश देता है कि इंसान को अपने शुभ-अशुभ कर्मों के फल को अवश्य भोगना पड़ेगा। पुनर्जन्म के सिद्धान्त के कारण प्रत्येक मनुष्य आशावादी बना रहता है। मोक्ष भारतीय संस्कृति के दिव्य स्वरूप को संकेत करता है कि आदमी के जीवन का लक्ष्य परमेश्वर तक पहुँचना है। इस संस्कृति में व्यक्ति समाज के लिए अर्पित होकर जीवन की ऊँचाइयों का स्पर्श कर सकता है। यह संस्कृति व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा तो करती ही है, किन्तु साथ ही व्यक्ति अपने कर्त्तव्य के प्रति समर्पित होकर समाज के लिए वन्दनीय हो सकता है। भारतीय संस्कृति के ढाँचे में ढला हुआ आदमी निरन्तर ही प्रार्थना करता रहता है—

भाग्यवान हूँ इस ही में, यह विजन कुटीर करूँ सुरभित।
नहीं तनिक इच्छा मुझको, मधुकर-मंडित आरामों की।
दुर्बल अंग, स्वल्प सौरभ, मम कामस्थल यह कोन है।
इसे सजाऊँ, इसे रिझाऊँ, केवल यही कामना है।
यही लालसा हिय में इसका, इक दिन बिंध गलहार बनूँ।
अपना सब सौरभ समाप्त कर, रजकन में बस वास करूँ।
(पुष्प की अभिलाषा—राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन)

मानव-जीवन में व्यायाम का स्थान

ब्र० हरिकृष्ण शास्त्री व्यायाम विशारद

यदि सूर्य में प्रकाश न हो, तो सूर्य केवल-मात्र राख का समूह रह जायेगा। यदि मनुष्य व्यायाम नहीं करता है, तो मनुष्य जीते-जी मृत व्यक्ति के समान बन जाता है। यदि मनुष्य संसार में निर्बलता के अभिशाप से बचना चाहता है, यदि बलवानों के द्वारा तिरस्कृत नहीं होना चाहता है, यदि अपने जीवन को राष्ट्र के लिए समर्पित करना चाहता है, तो मनुष्य को व्यायाम का आश्रय लेना चाहिए। निर्बलता केवल व्यक्ति के लिए अभिशाप ही नहीं है, अपितु यह राष्ट्र के मेरुदण्ड को तोड़ देती है। व्यक्ति के सहयोग से राष्ट्र का ढाँचा खड़ा होता है, यदि एक व्यक्ति भी निर्बल हो जाता है, तो राष्ट्ररूपी महल की एक ईंट हट जाती है। इसलिए राष्ट्र-रूपी महल को मजबूत बनाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सुविधा अनुसार व्यायाम करना चाहिए। टाम्सन का यह वचन हमारे हृदय में व्यायाम के लिए अवश्य स्थान बनायेगा—

आनन्द का मुख्य सिद्धान्त तन्दुरुस्ती है और तन्दुरुस्ती का मुख्य सिद्धान्त कसरत है—*Health is the vial Principle of bliss; and exercise of health.*"

व्यायामशील के शरीर में स्वास्थ्य का निवास तो होता ही है, किन्तु साथ ही उसके जीवन में इन्द्रिय-सयम का विकास भी होता है। जिस प्रकार तारों से विहीन आकाश की कल्पना नहीं की जाती है, उसी प्रकार व्यायाम रहित मनुष्य अपने मन पर नियन्त्रण कर सकेगा, यह कल्पना असम्भव है।

व्यायाम मानव जीवन की सर्वोत्तम सम्पदा है। व्यायाम के महत्व के विषय में महर्षि चरक ने लिखा है—"व्यायाम करने से शरीर की पुष्टि, गात्रों की कान्ति,

अभिलाषाओं का हिंडोला कभी न रुकने वाला।
चाहे नर का होवे जग में अर्थी उठने वाला ॥

मांसपेशियों में सन्तुलित उभार, जठराग्नि की तीव्रता, आलस्य-हीनता, स्थिरता, हलकापन और मलादि की शुद्धि होती है।"

शरीरोपचयः कान्तिर्गात्राणां सुविभक्तता।
दीप्ताग्नित्वमनालस्यं स्थिरत्वं लाघवं मृजा ॥

मनुष्य के मन मे बुढ़ापे का भय सदा बना रहता है। बुढ़ापा एक बार आकर फिर जाने का नाम नहीं लेता है और जवानी जाकर फिर लौटकर नहीं आती है। हर आदमी के दिल में यह इच्छा होती है कि वह बुढ़ापे के आतंक से बचे। यदि हमारे मन में बुढ़ापे के लिए घृणा है, तो महर्षि चरक के इस वचन पर आज से ही आचरण शुरू कर देना चाहिए—"व्यायाम करने वालों पर बुढ़ापा सहसा आक्रमण नहीं कर सकता है—न चैनं सहसाक्रम्य जरा समधिरोहति।" व्यायाम एक कला है इस कला को समझकर ही व्यक्ति स्वास्थ्य के नियमों पर चल सकता है अच्छे स्वास्थ्य के लिए व्यायाम आवश्यक है। स्वास्थ्य मनुष्य की अर्जित सम्पदा है। इस सम्पदा को प्राप्त करके मनुष्य संसार में हर प्रकार के सुखों को प्राप्त कर सकता है। सुख के मूल में व्यायाम तो है ही, किन्तु यदि व्यायाम निश्चित समय पर किया जाये, तो उससे अधिक लाभ होता है। व्यायाम के लिए प्रातःकाल का समय सर्वोत्तम होता है। प्रातः का समय स्वच्छ वायु से परिपूर्ण होता है, इसलिए यदि हम उस समय व्यायाम करते हैं, तो श्वास-प्रश्वास के माध्यम से हमारे शरीर में शुद्ध वायु का प्रवेश होगा। शुद्ध वायु मनुष्य के लिए पृथ्वी पर अमृत के समान है।

व्यायाम के अनेक रूप हैं—दण्ड-बैठक लगाना, मुगदर घुमाना, दौड़ना, आसन करना, तैरना, कुश्ती लड़ना आदि। इन व्यायामों में आसन ही एक मात्र सर्वांगपूर्ण व्यायाम है और सबके लिए आसन सभी उम्र वालों के लिए लाभकारी है। अन्य व्यायाम वृद्धावस्था में कष्टदायक सिद्ध होते हैं। आसन के द्वारा हमारे भिन्न-भिन्न रोग दूर होते हैं और इन आसनों का प्रभाव हमारी भिन्न-भिन्न इन्द्रियों पर पड़ता है। इस प्रकार व्यायाम के संसार में आसनों का स्थान महत्त्वपूर्ण है। आसन निरोग काया के लिए रामबाण हैं।

यदि हमारे दिल में थोड़ा भी जीवन के लिए स्नेह है, यदि राष्ट्र के लिए स्नेह है, यदि सुख की प्रबल कामना है, यदि जीवन में शान्ति प्राप्ति की इच्छा है;

अभियान करने से प्रथम निश्चित दिशा का ज्ञान हो।
निश्चित मिलेगा लक्ष्य इक दिन गर सदी प्रस्थान हो ।।

तो हमें नियमित रूप से अपनी सुविधा के अनुसार आज से ही व्यायाम प्रारम्भ कर देना चाहिए। अन्यथा हमें राष्ट्र-नायक लोकमान्य तिलक के इस विचार का गवाह बनना पड़ेगा—"शरीर रोगी और दुर्बल रखने के समान दूसरा कोई पाप नहीं है।"

* अनुभव कुञ्ज *

फूल-फूल को चुन लो, उपवन के जा बीच।
काँटों से बचकर रहो, यह स्वभाव से नीच ।।
दुर्गुण दुर्जन देखता, गुण लखता विद्वान्।
इसीलिए होता सदा, बुधजन का सम्मान ।।
दुष्टजनों की मित्रता, रहे न स्थिर-वेष।
पल भर तो मैत्री रहे दूजा क्षण विद्वेष ।।
मधुर वचन पल में हरे, भीषणतम भी कोप।
मीठी वाणी बोलिए, टिके न कोई तोप ।।
रस पीकर क्षण में उड़, यही भ्रमर का काम;
किया पान रस डट जहाँ, उसका ना ले नाम ।।
पुष्प-गन्ध से अधिक है, कीर्ति की गुण-गन्ध।
इसीलिए हरदम करे कीर्ति-कार्य-प्रबन्ध ।।
व्यवहारों से ही सदा, नर की हो पहिचान।
बिन बोले काक पिक का कैसे हो अनुमान ।।
सुन्दर के तन पर सभी, फबती है हर चीज।
रूप-हीन नर के लिए, सुघर वस्तु नाचीज ।।

— रवीन्द्रकुमार पूर्वमध्यमा

विद्वान् सर्वत्र पूज्यते

महेन्द्र पालः शास्त्री
विद्यावाचस्पतिः

सद्गुणम् पश्यति प्राज्ञो, नहि दुर्गुण-कर्दमम् ।
संगृह्णाति मरन्दं हि, भ्रमरो नहि कन्टकम् ।।

× × × ×

नम्रतायां सदा वासो, विद्यायां सततं रुचिः ।
विश्वासो करुणायाञ्च, भवति विदुषां सदा ।।

(सू० सी०)

कः खलु संसारे एतदृशः शक्ति-सम्पन्नः वर्तते यः तस्य प्रतिस्पर्धी भवेत् । विदुषाम् महत्वम् नहि परिगणनीयम् वर्तते । विद्वान् निज-विद्या-प्रभया संसारे सम्मानितः भवति । विद्या-प्रभा तु विनाशरहिता वर्तते । विद्यया एव तस्य जीवनम् सारस्य-विभव-विराजितम् भवति । विद्या एव तस्य कृते मनोरंजनम् विद्यते । विद्या एव तस्य कृते विभूषणम् वर्तते । विद्या एव तस्य कृते परम-विभव-समूहः वर्तते । यः खलु पुरुषः एतादृशः विद्या-वैभव-विराजितः वरीवर्ति, तस्य सम्मानम् सर्वत्र कथम् न भविष्यति । चाणक्येन सम्यक् समीरितम्—

विद्वत्वं च नृपत्वं च नैव तुल्यं कदाचन ।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते ।।

विद्या ददाति विनयम्" इदम् कथनम् वस्तुतः सत्य-शोभितम् वर्तते । विदुषः जीवने विनय-पुष्पम् प्रतिपलम् विकसति, अतएव तस्य जीवने दुर्गुण-गण-निवासः न भवति । प्राज्ञस्य सर्वत्र सम्मान-कारणम् तस्य स्वभावः एव वर्तते ।

नरक कहाँ है ? अभिमानी नर जीवन के हर पल में।

स्वर्ग कहाँ है ? अभिमान रहित जीवन के शत दल में'।

विद्वान् सर्वहिते सक्तो, नृपो-निज-हिते रतः।
तस्मात् विद्वान् सुपूज्यो हि, वर्तते खलु नो नृपः॥

× × × ×

विद्यायां निरतो-विद्वान्, महिपो निरतो धने।
सुविद्या-निरतो वन्द्यो, भवति जगती तले॥ (सू० सी०)'

संसारे यः विकासः परिलक्षित भवति तस्य मूले विदुषाम् परिश्रमः विराजते। यदि विद्वान् संसारे न भवेत् तर्हि अयम् संसारः अन्धकारमयः भवेत्। विद्वान् कामम् संकट-ग्रस्तः भवेत्, परन्तु सः दिवा-निशम् विद्या-साधनायाम् निरतः भवति। वस्तुतः समाजस्य विकासे विदुषाम् योगदानम् मा वतायाः इतिहासे अविस्मरणीयम् वर्तते। इदमेव कारणम् वर्तते यत् समाजः तम् विमल-मनसा स्मरति सततम्।

सर्वे मनुष्याः जानन्ति मूर्खाणाम् संगतिः सदा दुःख-दायिका वर्तते. यतोहि : अज्ञान-निशा-निवासी भवति। अज्ञान-निशा समेषाम् कृते कष्ट-सम्पादिका वर्तते अयम् सुहृदाम् अनुभवः। विदुषाम् सहवासः तु प्रतिपलम् सौख्य-सुधा-प्रदाय : वरीवर्ति। विदुषाम् इमम् महिमानम् विज्ञाय शास्त्रकाराः तस्य गुण-गण-गौरवम् विविधत्वेन समामनन्ति। भवान् मानस-चक्षुषा विदुषाम् विषये इमौ श्लोकौ विलोकयतु—

क्षणिक प्राज्ञ-संक्रोधो, नृप-क्रोधो भयंकरः।
सर्वं दहति तत्क्रोधः, तस्मात् प्राज्ञो विशिष्यते॥

× × × ×

तुष्यति बहु-यत्नेन क्षणमात्रं महीधरः।
प्राज्ञस्तु स्वल्प यत्नेन, संतुष्यति च तत्क्षणम्। (सू० सी०)

卐

बातचीत की कला

नरेन्द्रपाल सिंह विद्यावाचस्पति, प्रधान आर्य कुमार परिषद्

सूरज अपने प्रकाश के कारण पहचाना जाता है। चन्द्रमा अपनी चाँदनी के कारण पहचाना जाता है। आदमी भी अपनी बातचीत के कारण पहचाना जाता है। किसी को बातचीत करते हुए देखकर यह पता लगाया जा सकता है कि वह किस प्रकार का आदमी है ? बातचीत कुलीनता की भी परिचायिका है और नालायकियत की भी परिचायिका है। आप बालकृष्ण भट्ट के यदि इस वचन को याद रखेंगे, तो आपके जीवन में एक नया अध्याय जुड़ जायेगा—"हमारी जिह्वा कतरनी के समान सदा स्वच्छन्द चला करती है, उसे यदि हमने दबाकर काबू में कर लिया तो क्रोधादिक बड़े-बड़े अजेय शत्रुओं को बिना प्रयास ही जीतकर अपने वश में कर डाला।" शत्रु को काबू में करने का कितना आसान रास्ता है ? पढ़ने में तो बात बहुत छोटी-मोटी और प्यारी लगती है, परन्तु यह कार्य परिश्रम साध्य है। वाणी का उचित अवसर पर सही प्रयोग हर आदमी नहीं जानता है। यदि हम लोग शेक्सपीयर के इस कथन पर ध्यान दें, तो हमारी बातचीत में निखार आ जायेगा—"बातचीत प्रिय हो, पर ओछी न हो; चुहल हो, पर बनावट लिये ना हो; स्वच्छन्द हो, पर अश्लील न हो; विद्वतापूर्ण हो पर दम्भयुक्त ना हो; अनोखी हो, पर असत्य न हो।" बातचीत का वर्णन चल रहा है, तो आपके मन में यह सवाल उठ रहा होगा कि बातचीत के मुख्य तत्व क्या हैं ? तो लीजिए, आप सर डब्लू टेम्पिल के इस तथ्य पर ध्यान दीजिए और फिर आप बातचीत को कला में माहिर हो जायेंगे—"बातचीत का पहला अंश है सत्य, द्वितीय सुन्दर समझबूझ, तृतीय सुन्दर विनोद और चतुर्थ वाक्-चातुर्य—

"The first ingredient in conversation is truth; the next, good Sense; the third, good humour, and the fourth, Wit."

अधिकार सुरा नर जग में पी कौन न पागल होता ?
वर्षा में नदियों का जल क्या, निज-सीमा में होता ?

ठण्डी हवा के स्पर्श से किसका दिल खुश नहीं हो जाता है ? शीतल जल के पान से कौन आदमी प्रसन्न नहीं होता है ? आप यदि ठण्डे दिल से विचार करेंगे, तो आपको अनुभव होगा कि एक दूसरे के बीच में जो कटुता पैदा हो जाती है उसका प्रमुख कारण वाणी को तोलकर न बोलना है। तो आइये, संत कबीर आपसे बातचीत की कला के बारे में कुछ कहना चाह रहे हैं। आप उनकी बातों को ध्यान से सुनिये और अपनी बातचीत की कला में चार चाँद लगाइये—

ऐसी बानी बोलिए, मन का आपा खोय ।
औरन को सीतल करै, आपहुँ सीतल होय ॥

× × × ×

मधुर वचन है औषधी, कटुक वचन है तीर ।
स्रवन द्वार है संचरै, सालै सकल शरीर ॥

× × × ×

बोली एक अमोल है, जो कोई बोलै जानि ।
हिए तराजू तौलि के, तब मुख बाहर आनि ॥

× × × ×

जैसा अन जल खाइए तैसा ही मन होय ।
जैसा पानी पीजिए, तैसी बानी सोय ॥

× × × ×

बोलन ही पहचानिए, साहु चोर की घाट ।
अन्तर की करनी सबै, निकसै मुख की बाट ॥

× × × ×

आप जब शान्त दिल से बातचीत की कला पर विचार करेंगे, तो आपको अनुभव होगा कि वाणी को तोलकर न बोलने के कारण महाभारत का युद्ध हुआ। आदमी के जीवन में इस वाणी के कारण कोई न कोई बखेड़ा उठ खड़ा होता है और जीवन महाभारत का स्वयं ही केन्द्र बन जाता है। यदि आप बातचीत की कला में निपुण होना चाहते हैं, तो आपको प्लूटार्क के इस वचन पर अवश्य ध्यान देना चाहिए—"सुनना सीखो, तुम्हें उन लोगों से भी लाभ होगा जिन्हें ठीक तरह

चिन्तन बिन मानव का जीवन पशु समान हो जाता ।
पाप-पन्थ पर चलकर फिर वह बार-बार पछताता ।।

से बातचीत करना नहीं आता —*Know how to listen, and you will Profit even from those who talk badly.*" यह तो प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि जो आदमी बातचीत की कला में माहिर होता है, वह जीवन के हर क्षेत्र में सफल हो जाता है। बातचीत को प्रभावशाली बनाने के लिए यदि आप चाहें तो प्रसिद्ध निबन्धकार बेकन के इस सामयिक परामर्श से लाभ उठा सकते हैं—"बातचीत का अच्छा ढंग यह है कि प्राप्त प्रसंग के साथ कुछ तर्क भी मिला रहे, दृष्टान्तों और कथाओं के साथ युक्ति भी रहे, प्रश्नों के साथ सम्मति भी प्रकाशित की जाये और हँसी दिल्लगी के साथ कुछ काम की बात भी रहे।"

आप अपनी बात को प्रभावशाली बनाने के लिए ऊपर बतायी गई बातों पर ध्यान दीजिये। यदि आप प्रतिदिन ध्यान देंगे, तो आपकी बातचीत की कला का हर व्यक्ति पर प्रभाव पड़ेगा। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जिस प्रकार सधे हाथों से छोड़ा गया तीर ठीक निशाने पर जाकर लगता है, उसी प्रकार आपके द्वारा उचित शब्दों का प्रयोग लक्ष्य वेध में सहायक बनेगा।

समय - महिमा

ब्र० गोपाल प्रसाद

शा
स्त्र

समय एव सर्वेशः, समयः एव पुण्यदः ।
समय एव सर्व-ध्नः, समय एव सर्वन्दः ॥१॥
महिमानं विजानाति, कालस्य यो न जीवने ।
विलपन् मानवोनूनं, नश्यति स महीतले ॥२॥

सूक्ति सीमन्तिनी)

सर्वेषाम् प्रतिभाजुषाम् अयमेव विचारः वर्तते यत् अस्मिन् संसारे सकल-महत्वपूर्ण-वैभवेषु समयः एव महनीयः वर्तते । यः मनुष्यः संसारे समय-महत्वम् परि-जानाति, सः प्रतिक्षणम् तस्य सदुपयोगे निरतः भवति । नहि कोऽपि मनुष्यः स॰यम् समुपेक्ष्य लोके साफल्यम् अधिरोहति । यथा सूर्यः प्रतिदिनम् ‹थासमयम् संसारम् प्र॰ाशयति, यथा चन्द्रः रजनीम् धवलयति, यथा पुष्प-प्रच॰ः संसारम् सुगन्धयति; तथैव मानवः अपि समयस्य सदुपयोगेन संसारम् निज-वशीकर्तुम् शक्नोति ।

समय-प्रभवं रत्नं, समय-प्रभवं धनम् ।
समय-प्रभवोमानः, समय-प्रभवो गुणः ।।

—सूक्ति सीमन्तिनी

यः मनुष्यः समयम् न सम्मानयति, समयः अपि तम् विनाशयति । किमु भवान् नेपोलियनमहोदयस्य ताम् प्रसिद्ध-कथाम् न जानाति, यस्मिन् वाटर लू-नामक-युद्धे नेपोलियनमहोदयः पराजितः बभूव; तस्य प्रमुख कारणम् विलम्बेन युद्ध-क्षेत्रे गमनम् आसीत् । यदि भवान् अपि समयस्य सदुपयोगम् नो करोति तर्हि एतत् सुनिश्चितम् वर्तते; भवतः जीवनम् अपि विनाशोन्मुखम् भविष्यति । अयम् सर्वथा सम्भवः विद्यते यत् विनष्टम् पुष्पम् पुनः विकसेत्, विनष्टम् बीजम् पुनः प्ररोहेत्,

वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैर्निषेकादिर्द्विजन्मनाम् ।
कार्यः शरीर संस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च ॥

विलुप्तम् रत्नम् पुनः मिलेत्; परन्तु मित्रवर! विगतः समयः नहि पुनः प्रतिनिर्वर्तते । कविना अपि कथितम् —

दिने तपति चण्डांशुः, रात्रौ चन्द्रो विभासते ।
एनयज्ञो यथाकालम्, कार्यं करोति सर्वदा ॥

(सूक्ति-सीमन्तिनी)

सकल-सफलता-मूलः समय-सदुपयोगः महापुरुषत्व-सम्पादने समय-सदुपयोग-महत्व-निहितः वर्तते । यदि कश्चित् जनः साफल्यम् वाञ्छति, तर्हि सः समयस्य सदुपयोगम् कुर्यात् । नहि कोऽपि मानवः समयम् अनादृत्य संसारे विजेता भवितुम् शक्नोति । यथा स्वर्णस्य प्रतिसूत्रम् बहुमूल्यम् भवति, तथा समयस्य प्रतिक्षणम् अपि बहुमूल्यम् वर्तते । समयस्य सदुपयोगाय मानवः प्रतिक्षणम् सद्ग्रन्थानाम् मननम्, महापुरुषाणाम् सत्संगम् च कुर्यात् । यतोहि मनुष्यः एनान् अन्तरेण समयस्य सदुपयोगे न सफली भविष्यति ।

काल-सुधां पिबन् मर्त्यो दुःखीभवति नो भुवि ।
सम्प्राप्नोति महारत्नं, कालज्ञः पुरुषः सदा ॥ (सू० सी०)

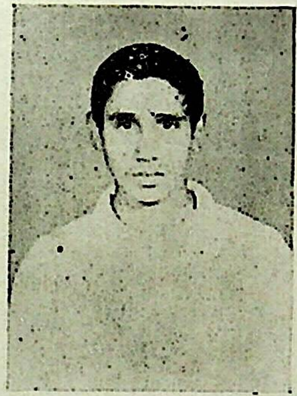
संसारे बहूनि रत्नानि सन्ति, परन्तु समयस्य सदृशम् न कश्चनम् रत्नम् वर्तते । यः मानवः समय-रत्नस्य महिमानम् अवगच्छति, वस्तुतः सः पुरुषः संसारे सौभाग्य-शाली वर्तते । तस्य मनुष्यस्य निकटे एव सौभाग्य-सम्पदा विलसति । परमेश्वरः अपि तस्य एव प्रार्थनाम् शृणोति । अतः मानवः परमेश्वरस्य समाजस्य च प्रियत्व-भाजनाय सदा समय-सदुपयोगम् कुर्यात्, अन्यथा मनुष्यः जीवन संग्रामे विनष्टः भविष्यति ।

॥ ओ३म् ॥

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर

के उदीयमान छात्र

गुरुकुल चैम्पियन



ब्र० कृपाल सिंह आर्य

मेधावी छात्र



सुरेश चन्द्र आर्य

छात्र सम्पादक



नरेन्द्र कुमार आर्य
(कलीना)

राष्ट्र उत्थान में युवा शक्ति का योगदान

ब्र० रणधीर कुमार विद्यारत्न

विद्वान् वर्चस्वी ब्राह्मण, अन्याय और शत्रु का दमन करने वाले शूरवीर क्षत्रिय, दूधारू गौएं, सदाचारिणी वीरांगनायें, बलवान और सभ्य देशभक्त युवक ही राष्ट्र की सच्ची सम्पत्ति हैं। संस्कृत भाषा का यह युवा शब्द 'यु' मिश्रणेऽमिश्रणे च धातु से बना है जिसका अर्थ है कि जिसमें बनाने और बिगाड़ने की शक्ति हो उसे युवा कहते हैं। युवा शक्ति से राष्ट्र का उत्थान कैसे हो सकता है यह एक विचारणीय प्रश्न है। इस समस्या का समाधान करते हुए ऋग्वेद के एक मन्त्र में बड़ा सुन्दर चित्रण किया गया है—

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदः ततो दीक्षामुपनिषे दुग्रें।
ततो राष्ट्रं बल भोजश्च जातं तदस्मैदेवा उपसन्नमन्तु ।।

राष्ट्र का कल्याण चाहने वाले, ऋषियों ने युवा वर्ग को तप और दीक्षा से युक्त किया जिससे राष्ट्र शक्तिशाली बना। यह है वेद प्रतिपादित राष्ट्र के उत्थान की प्रक्रिया, इस प्रक्रिया के आधार पर ही हमारा राष्ट्र विश्वगुरु था। अतः राष्ट्रोत्थान में सदाचारी स्वदेश प्रेमी युवा शक्ति का योगदान आवश्यक है। इतिहास साक्षी है जज-जब राष्ट्र पर संकट आया युवा शक्ति ने ही उसे सम्भाला। भगवान् राम एवं श्रीकृष्ण ने युवावस्था में ही आततायी रावण, क्रूर कंस का वध करके स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण किया था मध्यकाल में चाणक्य एवं चन्द्रगुप्त जैसी युवा शक्तियों ने ही आर्यावर्त्त का पुनरुत्थान किया मुगलकाल में महाराणा प्रताप और शिवाजी जैसे वीर युवकों ने ही राष्ट्र की सुरक्षा के लिए अपना सर्वस्व समर्पण कर दिया। ब्रिटिशकाल में मातृभूमि को स्वतन्त्र कराने के लिये नेता सुभाष, आजाद, भगतसिंह, बिस्मिल आदि अनेक युवक शहीदों ने अपना अविस्मरणीय बलिदान कर राष्ट्र को नवचेतना प्रदान की। महारानी पद्मावती और रानी लक्ष्मीबाई आदि युवा नारियों का योगदान भी इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

अन्य:यी का बल बढ़ता अन्याय सहन करने से ।
इसीलिए प्रतिकार उचित उसके पहले बढ़ने से ।।

अभी अधिक दिन नहीं हुए जबकि 'बर्बर पाकिस्तान, लड़कर लेंगे हिन्दुस्तान' के स्वप्न साकार करना चाहता था। तब हमारे माननीय प्रधानमन्त्री स्वर्गीय लाल बहादुर शास्त्री ने राष्ट्र संरक्षण के लिये 'जय जवान' 'जय किसान' का नारा लगाकर राष्ट्र की युवा शक्ति को उभारा था। स्वामी विवेकानन्द ने राष्ट्र की युवा शक्ति को उद्बोधित करते हुए कहा था—

पत्थर सी हों मांस पेशियाँ लोहे से भुजदण्ड अभय ।
रग रग में जल रही आग हो तभी जवानी पाती जय ।।

युवक राष्ट्र का प्राण होता है। प्राण के अभाव में जिस प्रकार हमारा शरीर निर्जीव हो जाता है ठीक उसी प्रकार युवा शक्ति के अभाव में राष्ट्र निष्प्राण हो जाता है। युवा वर्ग राष्ट्र का जगमगाता हुआ वह दीपक है जिसकी ज्योतिपुञ्ज से राष्ट्र देदीप्यमान होता है युवा शक्ति का पवित्र योगदान ही राष्ट्र को उन्नति के शिखर पर पहुँचा सकता है। किन्तु आज हमारा दुर्भाग्य है कि पाश्चात्य सभ्यता का पुजारी मैकाले की योजना से प्रभावित युवक राष्ट्र के लिये समस्या बना हुआ है।

अतः आज आवश्यकतानुसार युवकों को भारतीय सभ्यता और संस्कृति से प्रभावित कर राष्ट्र उत्थान के लिये प्रेरित किया जाये—वेद के शब्दों में—'सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्'' राष्ट्र का प्रत्येक युवक सभ्य, सुसंस्कृत और बलवान् होना चाहिये क्योंकि सभ्य सुसंस्कृत युवा वर्ग ही राष्ट्र की धुरी होता है। इसलिये राष्ट्ररूपी गाड़ी को उत्थान के मार्ग पर ले जाने के लिये युवा शक्ति रूपी धुरी का योगदान आवश्यक है।

इसलिये प्रत्येक युवक को तन मन धन से अपने राष्ट्र की सेवा करनी चाहिए यदि युवा शक्ति का पवित्र योगदान राष्ट्र को मिलेगा तो वह दिन दूर नहीं जबकि यहाँ—

प्रेम अहिंसा की भाषा को दुष्ट समझ ना पाता।
ईंटों का उत्तर पत्थर से उसको यह है भाता॥

वही प्रेम गङ्गा यहाँ फिर बहेगी।
जो संसार की ताप माला हरेगी।
कहेगा तभी विश्व एक स्वर में सारा।
वही वृद्ध भारत गुरु है हमारा॥

* जीवन में सुख-सुमन खिलेगा *

यदि शरीर सुस्वस्थ रहेगा, जीवन में सुख-सुमन खिलेगा।
रोगी काया वाला मानव, दुःख पावक में सदा जलेगा॥
नर जीवन के सुख पाने को,
व्यायाम करें प्रतिदिन मन से।
व्यायामशील नर को कोई,
रोग न लखता तीक्ष्ण नयन से॥
इसी लिए व्यायाम करो गर, जग में तुम सुख-सार चाहते।
सामाजिक जीवन में गर तुम बलवानों का प्यार चाहते॥
उचिताहा -विहार मनुज का,
सकल सुखों का नित साधक है।
यही मनुज जीवन का संयम,
यही सकल दुःख का नाशक है॥
इसीलिए प्रातः सायं तुम, खुश दिल होकर व्यायाम करो;
स्वयं स्वस्थ बन करके जग में, सब दुखियों के दुःख-धाम हरो॥

— ब्र० वेदकुमार [मल्ल युद्ध-विशारद]

विद्यार्थी जीवन और अनुशासन

—प्रेमचन्द्राय विद्यारत्न, [ढक्का]

"शतायुर्वै पुरुषः" यह ब्राह्मण ग्रन्थ का वचन है। मानव की सौ वर्ष की आयु को चार आश्रमों में विभक्त किया गया है। जिन्हें ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास की संज्ञा दी गई है। ब्रह्मचर्याश्रम ही विद्यार्थी जीवन है। यह वह अवस्था है जिसमें मनुष्य सांसारिक मायाजाल से दूर रहकर विभिन्न शास्त्रों का अध्ययन करते हुए विनम्रता, सदाचार आदि मानवीय गुणों का विकास करता है।

प्राचीन काल में छात्र को गुरुओं के सान्निध्य में रहकर वेद वेदांगों के अध्ययन के साथ-साथ शारीरिक मानसिक एवं आत्मिक विकास का पूर्ण अवसर प्राप्त होता था जिससे सम्पूर्ण जीवन में सुख शान्ति का साम्राज्य बना रहता था। यही हमारी विद्यार्थी जीवन की प्राचीन पद्धति है जिसमें वेदारम्भ संस्कार से लेकर समावर्तन संस्कार पर्यन्त विद्या प्राप्ति के साथ नैतिक नियमों के पालन से छात्र को अनुशासनशील बनाया जाता है। वेदारम्भ संस्कार में—

इस मन्त्र के द्वारा छात्र अपने जीवन को शुभ संकल्पों से युक्त बनाने की प्रतिज्ञा करता है। यहीं से छात्र को अनुशासनशील बनने की शिक्षा दी जाती है। अनुशासन शब्द का मोटा अर्थ है—आश्रम मर्यादाओं के साथ अपने नैतिक कर्त्तव्यों का पालन करना, पच्चीस वर्ष पर्यन्त गुरुचरणों में ब्रह्मचर्याश्रम की मर्यादा का पालन करते हुए विद्या अध्ययन की प्रक्रिया लुप्त प्रायः हो चुकी है किन्तु युग-प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द की महाअनुकम्पा से वर्तमान समय में भी यह पद्धति गुरुकुलों में विद्यमान है जिनमें विद्यार्थी जीवन की अनुशासनबद्ध परम्परा जीवित दिखाई पड़ती है, किन्तु वर्त्तमान काल में आधुनिक शिक्षा से प्रभावित छात्र जीवन बहुत विकृत हो चुका है। आज अनुशासनहीन छात्र अपने माता-पिता एवं गुरुजनों के लिये सिरदर्द बना हुआ है। अतः वर्त्तमान समय में छात्रों के लिये अनुशासन की विशेष आवश्यकता है क्योंकि अनुशासन ही विद्यार्थी जीवन का प्राण है जिस

प्रकार प्राण के निकल जाने पर निष्प्राण शरीर का कोई मूल्य नहीं उसी प्रकार अनुशासनहीन छात्र का कोई महत्व नहीं। अनुशासन से हीन छात्र न तो अपना जीवन सफल बना सकता है और न अपने राष्ट्र का नाम ही उज्जवल कर सकता है वर्त्तमान अनुशासनहीन छात्रों से सारा राष्ट्र परेशान है। इस अनुशासनहीनता का प्रमुख कारण वर्त्तमान शिक्षा प्रणाली है। आज की शिक्षा में अनुशासन नाम की कोई चीज नजर नहीं आती जबकि अपनी प्राचीन शिक्षा प्रणाली में अनुशासन का विशेष स्थान है। महर्षि धौम्य के शिष्य आरुणि और उपमन्यु का इतिहास छात्र जीवन के अनुशासन का आदर्शपूर्ण उदाहरण है।

अनुशासन ही विद्यार्थी जीवन का परम भूषण है। जिस प्रकार गन्धहीन पुष्प किसी के मन को नहीं भाता उसी प्रकार अनुशासनहीन छात्र किसी का प्रिय पात्र नहीं बन पाता। अनुशासन की भट्टी में पककर ही छात्र असली कुन्दन बन सकता है। वर्त्तमान अनुशासनहीन छात्रों में पुनः अनुशासन की स्थापना के लिए शिक्षा पद्धति में सुधार किया जाये। विभिन्न विषयों के अध्ययन के साथ-साथ नैतिक शिक्षा आवश्यक की जाय। नैतिक शिक्षा से ही छात्र का जीवन पवित्र एवं अनुशासनप्रिय बन सकता है। अनुशासनशील सच्चरित्र छात्र ही राष्ट्र की सच्ची सम्पदा है। इसलिए इस राष्ट्रीय सम्पदा को सुरक्षित बनाये रखने के लिए विद्यार्थी जीवन में अनुशासन की अति आवश्यकता है।

卐

* जीवन निर्माण के तीन स्तम्भ *

—ब्र० देवपाल विद्यावाचस्पति

नैतिकता मानव जीवन के लिए अमृत है। यदि आदमी की जिन्दगी में नैतिकता के फूल नहीं खिलते हैं, तो इसका मतलब है आदमी पतन के मार्ग पर बढ़ता हुआ जा रहा है। नैतिकता का मतलब है—जीवन में उत्तरदायित्व के साथ प्रतिपल आगे बढ़ना। यह नैतिकता नीति सम्बन्धी मोटी-मोटी पुस्तकों के पढ़ने से नहीं आती है। नैतिक जीवन के निर्माण में तीन व्यक्तियों का योगदान महत्वपूर्ण है—१. माता, २. पिता, ३. आचार्य।

मातृ महिमा—माता का महत्व संसार में सर्वविदित है। माँ जो कुछ चाहती है बालक वैसा ही बन जाता है। माँ के महत्व के विषय में उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द ने लिखा है—"ऐसी माताओं से देश का मुख उज्जवल होता है जो देश हित के सामने मातृ स्नेह की धूल बराबर भी परवाह नहीं करतीं। उनके पुत्र देश के लिए होते हैं, देश पुत्र के लिए नहीं होता।······माँ के बलिदानों का प्रतिशोध कोई बेटा नहीं कर सकता, चाहे वह भूमण्डल का स्वामी ही क्यों न हो।" मातृत्व का यह मूल्यांकन भावुकता का परिणाम नहीं है। माँ का बलिदान, माँ का तप, त्याग, माँ का स्नेह भरा हृदय, माँ का शौर्य इन सबके योग से बालक का निर्माण होता है। नेपोलियन बोना पार्ट ने माँ के विषय में कितना आलोकमय निर्देश दिया है, इस निर्देश को अपने हृदय के मन्दिर पर लिख लेना चाहिए—"बालक का भाग्य सदैव उसकी माँ द्वारा निर्मित होता है।" प्रस्तुत प्रसंग में कोलरिज के इस वचन पर ध्यान देना हमारा कर्त्तव्य बन जाता है—"जननी जननी ही है, जीवित वस्तुओं में जननी सबसे अधिक पवित्र है—

A mother is a mother still,
The holiest thing alive.

पितृ महत्व—बालक के निर्माण में पिता का महत्वपूर्ण स्थान है। पिता का अर्थ है रक्षा करने वाला—पाति इति पिता। पिता बालक के जीवन में गुणों का विकास हो इस बात पर सदा ध्यान रखता है। पिता के व्यक्तित्व में कठोरता

का अंश रहता है । वह अपने इस व्यक्तित्व के कारण बालक के गुणों के विकास में कारण बनता है । माता का कोमलांश बालक में करुणा, दया आदि रूप में अभिव्यक्त होता है और पिता का पारुष्य बालक में पौरुष का प्रदीप बनकर जलता है। पिता के महत्व के विषय में वाल्मीकि रामायण में लिखा हुआ है—"हे सीता ! पिता की सेवा करना जिस प्रकार कल्याणकारी माना गया है, वैसा प्रबल साधन न सत्य है, न दान-सम्मान है और न प्रचुर दक्षिणावाले यज्ञ ही हैं । पिता की सेवा अथवा उनकी आज्ञा का पालन जैसा धर्म दूसरा कोई भी नहीं है—

न सत्यं दानमानौ वा न यज्ञाश्चाप्तदक्षिणाः ।
तथा बलकराः सीते ! यथा सेवा पितुर्हिता ।।

× × × × ×

न ह्यतोधर्माचरणं किंचिदस्ति महत्तरम् ।
यथा पितरि शुश्रूषा तस्य वा वचन क्रिया ।।

पिता इस प्रकार बालक के जीवन में नैतिक गुणों का आधान करता है । बालक मिट्टी का लोंदा मात्र होता है पिता रूपी कुम्हार उस लौंदे को जिस रूप में ढालना चाहता है उस रूप में ढाल लेता है । माँ चित्र तैयार करती है और पिता अपने रक्षण रूपी शक्ति से उस चित्र को चमकदार बना देता है । माता-पिता के योगदान से बालक के व्यक्तित्व को नया रूप मिलता है । पिता नैतिक मान-दण्डों के प्रति बालक सदा सावधान रहे । इस बात के लिए प्रयास करता है यही पिता का पितृत्व है ।

आचार्य महिमा बालक निर्माण में आचार्य का स्थान केवल महत्वपूर्ण ही नहीं है, अपितु अपरिहार्य है । आचार्य बालक के व्यक्तित्व को हर प्रकार से निखारने का प्रयास करता है । वह छात्र को शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक इन सब मार्गों से ले जाने का प्रयास करता है । बालक के जीवन में किसी प्रकार का अभाव न रहे, यही आचार्य का सदा प्रयास होता है । वह बालक को एक नया जीवन देता है । वह बालक को यह सिखाता है कि उसे समाज, राष्ट्र विश्व के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिए । जब आचार्य का आचरण छात्र के जीवन में उतर आता है, तब छात्र का जीवन सूरज सा तेजस्वी हो जाता है, चन्द्रमा सा आकर्षक हो

स्वयं ही यौवन अविवेक का महाकेन्द्र होता है ।
अधिकारों का सुरा-पानकर सकल-क्षेम खोता है ।।

जाता है, फूलों सा महक उठता है और दीपक सा प्रतिपल प्रकाश बिखेरता रहता है ।

इसी दिव्य जीवन का नाम है नैतिकता का फूल । इसी चरित्र का नाम है संगीत का आनन्द । इसी भावना का नाम है कर्त्तव्य परायणता । फिर तो व्यक्ति जिन्दगी के विशेष क्षण में भी नैतिकता से मुख नहीं मोड़ता है । चार सौ बीसी की आँधो उसे उड़ा नहीं सकती है । संकीर्गता का सर्प उसे डस नहीं सकता है । इसी प्रकार के लोगों के कन्धों पर राष्ट्र गतिशील बनता है । वस्तुतः माता-पिता आचार्य नैतिक जीवन के आधार स्तम्भ हैं । इसीलिए तो याज्ञवल्क्य को कहना पड़ा था—

मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद ।

मूर्ख पुराण

मूर्खजनों की संगति, सकल दुखों की खान ।
लाभ नहीं है स्वप्न में, प्रतिपल ही नुक्सान ।।१।।
मूर्खजनों से बोलना, निज सुख पर है घात ।
कलह द्वेष हरदम रहे, शान्ति डरे दिन-रात ।।२।।
मूर्खजनों को दूर से, करिए सदा प्रणाम ।
तभी बनेगा मनुज का, जीवन सुख का धाम ।।३।।
मूर्खजनों को कौन खुश, कर सकता अविराम ।
ब्रह्मा भी उससे डरें सुनकर उसका नाम ।।४।।
विषधर से बढ़कर जहर मूर्खजनों का संग ।
इसीलिए बचिए सदा, करके कोई ढंग ।।५।।

—ब्र० लेखराजसिंह [क्रीड़ामंत्री]



आर्य कुमार परिषद्

'अधिकारी वर्ग'

वांये से दायें:—
सर्व श्री–धर्म प्रकाश, कृपाल सिंह,
चन्द्र पाल (मन्त्री),
धर्मपाल (संरक्षक),
नरेन्द्रपाल (प्रधान), सुरेशचन्द्र
पीछे खड़े हुए–प्रणव, देव पाल,
हरिकृष्ण, लेखराज, केशव



* पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता *

ब्र० सुखपाल सिंह विद्यावाचस्पति

मानव-जीवन का मुख्योद्देश्य भोग-विलास ही नहीं अपितु भोग-प्रधान पाश्विक प्रवृत्तियों एवं स्वार्थ-प्रधान हिंसात्मक आसुरी प्रवृत्तियों से ऊपर उठकर मानवता के उच्च गुणों का विकास करते हुए देवत्व को प्राप्त करना है। इस पवित्र उद्देश्य की पूर्ति के लिये पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है।

भारतीय संस्कृति में मानव-जीवन को चार भागों में विभक्त किया गया है। जिनको ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम की संज्ञा दी गयी है। ब्रह्मचर्याश्रम ही विद्यार्थी जीवन है। ब्रह्मचर्य शब्द में ही सम्पूर्ण नैतिक भावों का समावेश हो जाता है। सामान्य तौर से चारित्रिक पवित्रता खानपान की शुचिता रहन-सहन की सादगी तथा विनम्रता आदि गुण ही नैतिकता के द्योतक हैं।

अपनी भारतीय परम्परा के अनुसार शिक्षा प्रारम्भ करने से पूर्व अर्थात् वेद, व्याकरण, दर्शन, गणित, विज्ञान, आयुर्वेद, अर्थशास्त्र आदि विभिन्न विषयों का ज्ञान कराने से पूर्व उपनयन व वेदारम्भ संस्कार के समय दीक्षा देने का विधान है। जिसका तात्पर्य ही यह है कि दीक्षापूर्वक शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए। दीक्षा के द्वारा उन नैतिक नियमों का ज्ञान कराया जाता है जिनका पालन करने से विद्यार्थी के जीवन में उच्च मानवीय गुणों का विकास होता है। तैत्तरीय उपनिषद् में अध्ययन-अध्यापन के विषय का वर्णन करते हुए लिखा है कि ऋतञ्च स्वाध्याय प्रवचने च, सत्यञ्च स्वाध्याय प्रवचने च, तपश्च स्वाध्याय प्रवचने च, शमश्च स्वाध्याय प्रवचने च" इत्यादि का यही अर्थ है कि छल कपट से रहित सत्याचरण करते हुए मन और इन्द्रियों को विषय-वासनाओं से रोकते हुए, प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए, पढ़ना और पढ़ाना चाहिए। ये ही वे नियम हैं जिनका पालन करने से विद्यार्थी जीवन में उदण्डता, उच्छृंखलता, अनुशासनहीनता, स्वेच्छाचारिता, विषय विलासिता आदि दुर्गुण आ जाते हैं जैसा कि प्रायः आजकल देखा जाता है कि

चाहे भरलो निज-जीवन का फूलों से हर कोना।
खिला नहीं गर स्नेह-सुमन फिर जीवन भर है रोना ॥

मैंकाले की शिक्षा-पद्धति में शिक्षित छात्र वर्ग नैतिकता से पृथक् होकर "साक्षरा विपरीता राक्षसाः भवन्ति" की उक्ति को चरितार्थ करते हुए देश के लिये एक गम्भीर समस्या बना हुआ है।

चरित्रबल ही मानव जीवन का प्रधान बल है। कहा भी है—"आचारः परमोधर्मः" "आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः" अर्थात् चरित्रहीन को विद्या भी पवित्र नहीं कर सकती। महाभारत में कहा है—"अक्षीणो वित्ततः क्षीणः वृत्ततस्तु हतोहतः" जो धन से हीन है वह हीन नहीं किन्तु जो चरित्र से हीन है वह मृत के समान है। अंग्रेजी के शब्दों में—

If wealth is lost nothing is lost,
If Health is lost something is lost,
If character is lost everything is lost.

अर्थात् यदि धन गया तो कुछ नहीं गया, यदि स्वास्थ्य गया तो कुछ गया और यदि चरित्र चला गया तो समझो सब कुछ चला गया। यास्क मुनि ने अपने निरुक्त शास्त्र में विद्या प्राप्ति के साथ नैतिक शिक्षा की आवश्यकता पर बल देते हुए एक रूपक के द्वारा बड़े मार्मिक शब्दों में कहा है—

'विद्या हवै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा शेवधिष्टेऽहमस्मि।
असूयकाया नृनवेऽमताय न मा ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम् ॥

विद्या ब्राह्मण के पास जाकर बोली कि मेरी रक्षा करो, मैं ही तुम्हारे कल्याण की निधि हूँ। निन्दक, असूयक, ईर्ष्यालु, अतपस्वी, चरित्रहीन को मुझे मत देना। जिससे में बलवती रहूँ।

वस्तुतः नैतिक आदर्शों से विहीन व्यक्ति की विद्या सर्वथा प्रभावहीन हो जाती है। "विद्या धर्मेण शोभते" अर्थात् नैतिक आदर्शों के साथ ही विद्या सुशोभित होती है। हमारा दुर्भाग्य है कि आजकल पाश्चात्य शिक्षा व सभ्यता का अन्धानुकरण करने वाले युद्ध भारतीय विद्वान् भी विद्यार्थी जीवन में नैतिक आदर्शों का मूल्यांकन नहीं कर रहे हैं। पाश्चात्य देशों में विद्यार्थी जीवन की नैतिकता नष्ट

सोना ही सब कुछ जगती में नहीं मनुज का होता।
यदि स्नेह से हृदय न पूरित हरदम ही दुःख होता।

प्रायः हो चुकी है वे ऐन्द्रियिक सुख भोग को शरीर की स्वाभाविक आवश्यकता मानकर स्पष्ट रूप से आमोद-प्रमोद करने में कोई दोष नहीं मानते। केवल इन्द्रिय सुख भोग को जीवन का लक्ष्य बनाना सर्वथा पशुता का जीवन है, इससे कभी भी मानवोचित गुणों का विकास नहीं हो सकता।

आज के छात्र कल को राष्ट्र के कर्णधार बनेंगे। यदि छात्रों का नैतिक जीवन ऊंचा नहीं होगा तो हम कभी भी ओजस्वी राष्ट्र की कामना नहीं कर सकते। वेद में कहा है—

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदः ततो दीक्षामुप निषेदुरग्रे।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं तदस्मै देवा उपसन्नमन्तु॥

यदि राष्ट्र को बलवान व ओजस्वी बनाना है तो जीवन के प्रथम भाग अर्थात् विद्यार्थी जीवन में संयमी जीवन व्यतीत करते हुए शिक्षा प्राप्त करनी चाहिये। जो लोग यह समझते हैं कि नैतिक शिक्षा के लिये हमें किसी न किसी सम्प्रदाय से अपना सम्बन्ध जोड़ना होगा और हम साम्प्रदायिकता के दल-दल में फंस जायेंगे। मैं समझता हूँ कि यह उनकी भूल है मैंने अपने लेख में जिन नैतिक आदर्शों का प्रतिपादन किया है उनका विरोध कोई भी सम्प्रदाय नहीं कर सकता।

नैतिक शिक्षा के आदर्श विश्व के मानव को मानवता के वास्तविक गुणों से सुभूषित करने वाले हैं। जिनका विचार यह है कि नैतिक शिक्षा से व्यक्ति धर्म भीरु बनकर साहस और उत्साह से हीन हो जाता है। शायद वे अभी ऐतिहासिक जानकारी से शून्य हैं कौन नहीं जानता कि महाबली रावण और क्रूर कंस का संहार करने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम, योगिराज श्री कृष्ण अपने नैतिक आदर्शों के कारण ही अपने देश के ही नहीं अपितु समस्त विश्व के जन मानस में श्रद्धा के पात्र बने हुये हैं। इतना ही नहीं इतिहास साक्षी है कि समय-समय पर आर्य जाति को नव चेतना देने वाले आचार्य शङ्कर, महर्षि दयानन्द, महात्मा बुद्ध एवं महावीर स्वामी आदि सभी महापुरुष नैतिकता की साक्षात् मूर्ति थे। सदियों से परतन्त्रता

धनुष से छूटा तीर यथा फिर कभी न वापिस आता।
अपमानित अपमान कभी भी, तथा भुला ना पाता॥

की शृंखला में जकड़ी हुई अपनी मातृभूमि को स्वतन्त्र कराने वाले अमर बलिदानी वीर महात्मा गांधी, नेता सुभाषचन्द्र, सरदार भगत सिंह, रामप्रसाद बिस्मिल, चन्द्र शेखर आजाद आदि सभी महान् आत्मायें नैतिक गुणों से सम्पन्न थीं।

नैतिकता मनुष्य को अमर बनाने वाला वह दिव्य गुण है जिसके कारण मनुष्य मरकर भी अमर कहलाता है। नैतिक शिक्षा से हमारे दुर्गुण, दुर्विचार नष्ट हो जाते हैं। सदाचार और सुविचारों की वृद्धि होकर आत्मबल एवं आत्मसुख प्राप्त होता है। आज हमारे देश में अधर्म, अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार व्याप्त हो रहा है। यदि हम इसको समाप्त करना चाहते हैं तो हमें शिक्षा के साथ-साथ नैतिक बल भी प्राप्त करना होगा। प्रश्न उठता है कि विद्यार्थी जीवन में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता क्यों ?

उत्तर है कि "यन्नवे भाजने लग्नः संस्कारो नान्यथा भवेत्" अर्थात्—नवीन पात्र में जिस प्रकार चित्रकारी कर दी जायेगी वह सदा वैसी ही बनी रहेगी। विद्यार्थी जीवन ही सम्पूर्ण जीवन की आधार शिला है। शिक्षा के साथ जिस प्रकार के अच्छे-बुरे संस्कार विद्यार्थी को दिये जायेंगे उसका जीवन वैसा ही बन जायेगा। इसलिये विद्यार्थी के सम्पूर्ण जीवन को उत्तम बनाने के लिये पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है।



वर्तमान परिस्थिति में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही उपयुक्त है

ब्र० रामेन्द्र कुमार आर्य दशम कक्ष

आज स्वतन्त्र भारत की अनेक समस्यायें जैसे शिक्षा समस्या, बेकारी समस्या, भ्रष्टाचार, जनसंख्या, मूल्य-वृद्धि आदि इन सभी समस्याओं के बीच शिक्षा की समस्या का भी एक जटिल प्रश्न है। आज देश के विचारशील नेता एवं शिक्षा शास्त्री यह अनुभव कर रहे हैं कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति से छात्रों में उद्दण्डता, उच्छृंखलता, अनुशासनहीनता स्वेच्छाचारिता निरन्तर बढ़ती जा रही हैं। आज देश को ईमानदार देशभक्त चरित्रवान नागरिक नहीं प्राप्त हो रहे हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के इकत्तीस वर्ष बीत जाने के बाद भी आज हम अंग्रेजी शिक्षा-पद्धति के गुलाम बने हुए हैं। इन सभी समस्याओं का समाधान गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली से ही हो सकता है। हमारे उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व माननीय राज्यपाल श्री चेन्ना रेड्डी ने अपने नैनीताल के भाषण में कहा था कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली से सौ वर्षों में भी समाजवाद नहीं आ सकता। क्योंकि हमारे देश के बड़े-बड़े घरानों एवं नेताओं के लड़के पब्लिक स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करते हैं। जहां का स्तर ऊंचा होता है, जब तक शिक्षा के क्षेत्र में अमीरी और गरीबी का भेदभाव रहेगा तब तक समाजवाद का स्वप्न साकार नहीं हो सकता है। गुरुकुल शिक्षा-पद्धति की यह अपनी प्रमुख विशेषता है कि यहां सभी वर्गों के बालक समान वेशभूषा, रहन-सहन, खान-पान में पलकर शिक्षा प्राप्त करते हैं। सभी वर्गों के छात्र परस्पर पारिवारिक जीवन व्यतीत करते हैं। पारिवारिक जीवन में पलकर वे सामाजिक जीवन के अंग बनकर निकलते हैं। इस प्रकार गुरुकुल शिक्षा-पद्धति से समाजवाद स्वयं सिद्ध हो जाता है।

वर्तमान समय में विद्यार्थी एवं अध्यापकों की कोई आचार संहिता नहीं है, किन्तु हमारे शास्त्रकारों ने पढ़ने-पढ़ाने वालों की आचार संहिता का वर्णन करते है, कहा है "दमश्च स्वाध्यायं प्रवचने च, समश्च स्वाध्याय प्रवचने च, तपश्च स्वा-

जैसा अन्न मनुज खाता है, मन वैसा बन जाता ।
अवगुण दृष्टा मनुज कभी, सद्गुण ना लख पाता ।।

ध्याय प्रवचने च" अर्थात् इन्द्रियों का संयम करते हुए पढ़ो और पढ़ाओ, मन को बुरी वासनाओं से रोकते हुए पढ़ो और पढ़ाओ, तपश्चर्या करते हुए पढ़ो और पढ़ाओ ।

आचार्य उपनयन संस्कार के समय शिष्य को अपना अन्तर्वासी बनाकर उसके जीवन का निर्माण करता है । आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणम् कृणुते गर्भ-मन्तः अर्थात् आचार्य शिष्य के जीवन का निर्माण इस प्रकार करता है जैसे माता अपने गर्भस्थ बालक का संरक्षण व पालन पोषण करती है । शिक्षा के क्षेत्र में गुरु और शिष्य के सम्बन्ध की महत्ता इससे बढ़कर और क्या होगी ? गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में छात्र के हृदय और मस्तिष्क का निर्माण आचार्य के द्वारा होता है । यास्काचार्य के शब्दों में "आचारं ग्राह्याति आचिनोति अर्थान् आचिनोति बुद्धिमिति वा" अर्थात् जो आचरण की शिक्षा दे शब्दार्थों का संग्रह कराये और बुद्धि का विकास कराये उसे आचार्य कहते हैं । वर्तमान काल में छात्र से अध्यापक का सम्बन्ध केवल मात्र अपने पाठ्य पुस्तकों को पढ़ाने मात्र का होता है । थोड़े अंशों में आज की शिक्षा जीविका तो दे सकती है लेकिन जीवन का निर्माण नहीं कर सकती किन्तु हमारी गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली की यह विशेषता है कि इसमें भौतिक शिक्षा के साथ आध्यात्मिक शिक्षा का भी समावेश हो जाता है जिससे छात्र निरा भौतिक न बनकर अपने जीवन के मूल उद्देश्य को भी समझता है ।

वर्तमान समय में शिक्षा संस्थायें नगर बस्तियों के बीच गन्दे वातावरण में स्थित हैं जिससे छात्र समाज के गन्दे वातावरण से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता । गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के अनुसार शिक्षा संस्थायें कहां होनी चाहियें ? "उपह्वरे गिरिणां सङ्गमे च नदीनां धिया विप्रोऽजायातं" अर्थात् नगर के कोलाहल और कलख से दूर सघन वनों पहाड़ों की कन्दराओं, नदियों के सङ्गमों एवं शुद्ध प्राकृतिक स्थानों पर विद्वान्, बलवान, चरित्रवान छात्रों का निर्माण किया जाता है ।

आश्रमवास और ब्रह्मचर्य गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली की एक अपनी प्रमुख विशेषता है । आश्रम का अर्थ है जिसमें छात्र को परिश्रमी और उद्योगी बनाया जाये । ब्रह्मचर्य शब्द में तो शिक्षा प्राप्ति का सम्पूर्ण उद्देश्य ही निहित है । ब्रह्मचर्य

अन्याय सहन कर जो जीता, वह पशु सम हो जाता।
अपने सम्मुख भाग्य-चमन को खुद ही वह लुटवाता ॥

का अर्थ है शारीरिक, आत्मिक, बलवीर्य की प्राप्ति के साथ-साथ जिसमें महान बनने की भावना निहित हो।

जिस समय हमारे देश में गुरुकुल शिक्षा-पद्धति की यह व्यवस्था थी उस समय हमारे यहाँ अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार का नाम भी नहीं था। राजा अश्वपति ने घोषणा करते हुये कहा था—

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः
नानाऽहिताग्निर्नाऽविद्वान न स्वैरी स्वैरिणी कुतः।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में छात्र के जीवन और चरित्र को उज्ज्वल बनाया जाता था जिससे राष्ट्र का चरित्र उज्ज्वल बनता था किन्तु वर्तमान शिक्षा-पद्धति में इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं है। डा० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार के शब्दों में "आज शिक्षा के क्षेत्र में जो भी आंख उठाकर देखता है वह यह कहे बिना नहीं रह पाता कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति असफल हो चुकी है। गुरुकुल शिक्षा-पद्धति के लिये यह अवसर एक-एक चुनौति का अवसर है। चुनौति का क्या रूप है? चुनौति का रूप यह है कि वर्तमान शिक्षा संस्थायें फैक्ट्री का रूप धारण कर चुकी हैं। अध्यापक अपने को उच्च वेतन भोगी मजदूर समझने लगे हैं। छात्र भी शिक्षा संस्थाओं को फैक्ट्री समझते हैं। आये दिन हड़ताल करते हैं गुरु शिष्य में पिता-पुत्र का चरित्र विद्या में परिश्रम और समय का आज की शिक्षा में कोई स्थान नहीं है। गुरु शिष्य में पिता-पुत्र का पढ़ने-पढ़ाने में संयम सदाचार और परिश्रम का प्रमुख स्थान है। वर्तमान शिक्षा जगत की परिस्थितियों को देखते हुए गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली की नितान्त आवश्यकता है।"

* अपना डाक्टर आप बनिए *

समरभानु व्याकरणाचार्य आयुर्वेद रत्न

औषध गण के सदुपयोग से रोग दूर हो जाता ।
जसे सूरज के प्रकाश में तिमिर नहीं टिक पाता ।
पथ्य सदा रोगी के हित में कार्य किया करता ।
पथ्य बिना तो औषध भी ना लाभ किया करता ।
उचिताहार-विहार जगत में सकल सुखों का घर है ।
भूख लगे तब भोजन करना यही स्वास्थ्य का गुर है ।
जो इनकी करे उपेक्षा वह रोग-निलय बन जाता ।
तड़फ-तड़फ कर वह जगती में एक दिवस मर जाता ।

[आरोग्य-प्रदीप[

स्वास्थ्य मानव जीवन के लिए आवश्यक है । महर्षि चरक ने लिखा है—"स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए तीन आधार स्तम्भ हैं, १—आहार, २—निद्रा, ३—ब्रह्मचर्य—त्रय उपस्तम्भा आहारः स्वप्नो ब्रह्मचर्यमिति ।" स्वास्थ्य के लिए उपर्युक्त बातें परम आवश्यक हैं । यदि आप डाक्टर को अपने जीवन से दूर रखना चाहते हैं, तो आप इन बातों पर अवश्य ध्यान रखिये । १—भोजन से पहले हाथ, मुंह, पैर अवश्य धोइये और सोने से पूर्व हाथ, पैर, मुंह धोकर फिर पोंछकर सो जाना चाहिए । २—प्रातःकाल उठकर यदि गर्मी के दिन हैं, तो ठण्डा जल पीजिए और यदि सर्दी के दिन हैं तथा साथ ही कब्ज की भयंकर शिकायत हो तो आप एक पाव गर्म पानी चाय की तरह फूंक-फूंक कर पीजिए । इससे आपका पेट साफ रहेगा । ३—आपको यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि दिन में सोना हानिकारक है । आप इस स्वर्ण सिद्धान्त को सदा याद रखिये—जल्दी सोना और जल्दी उठना स्वास्थ्य का पहला फार्मूला है । ४—दिन में सूर्य किरणों के द्वारा स्नान अवश्य कीजिए । ५—प्रातःकाल का भ्रमण स्वास्थ्य के लिए रामबाण है । आपको

तेजस्वी नर कभी नहीं अपमान सहन कर सकता।
आहत होकर नाग कभी क्या मौन भला वह रहता ?

अपने स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए यह सदा ध्यान रखना होगा कि स्वास्थ्य के लिये मालिश आवश्यक है। यदि आप प्रतिदिन मालिश करते हैं, तो आप जिन्दगी के चमन में स्वास्थ्य के फूलों को खिलाये रखने के लिए प्रयास कर रहे हैं। ६–स्वास्थ्य के लिए आप महीने में एक बार उपवास करलें, तो बहुत अच्छा है। लीजिए, अन्त में इस विचार को गाँठ में बाँध लीजिए—"दिन के अन्त (शाम के समय) में दूध पीना चाहिए, रात के अन्त में पानी पीना चाहिए, भोजन के अन्त में मट्ठा पीना चाहिए। यदि आप मित्रवर ! इन उपायों का प्रयोग करते हैं, तो वैद्य बेचारा आपके पास नहीं फटकेगा—

दिनान्ते च पिबेद् दुग्धं, निशान्ते च पिबेत् पयः।
भोजनान्ते पिवेत् तक्रं, किं वैद्यस्य प्रयोजनम् ॥

दवाओं का समुचित चुनाव आपके स्वास्थ्य को बल प्रदान करेगा। नीचे कुछ प्रमुख रोगों की ओर संकेत किया जा रहा है, आप उनका समुचित प्रयोग कीजिए और स्वास्थ्य-लाभ उठाइए।

मानवः औषधि-सेवन

औषध का समुचित चुनाव ही सकल रोग को हरता।
अति दवाओं के प्रयोग से स्वास्थ्य शिशु है डरता।
निज प्रकृबि अनुकूल दवाओं का प्रयोग ही करिए।
अपने सारे रोग-गणों को उन औषध से हरिए ॥

पेट : मानव-स्वास्थ्य

पेट सकल रोगों का जग में एकमात्र कारण है।
और कब्ज के कारण यह बनता रोगी का रण है।
अगर स्वास्थ्य की इच्छा है निज पेट स्वच्छ नित रखिए।
उदर-सन्तुलन की गर इच्छा योगासन नित करिए ॥

× × × × ×

चोकर समेत आटे की रोटी पेट ठीक है रखती।
हरी सब्जियों की तरकारी उदर-रोग को हरती।

नरक कहाँ है ? अभिमानी नर जीवन के हर पल में।
स्वर्ग कहाँ है ? अभिमान-रहित जीवन के शत दल में।।

जो मानव "सलाद "मट्ठा" का नित प्रयोग है करता।
उस नर से तो रोग सदा ही डरा-डरा है रहता ।।

× × × × ×

[आरोग्य-प्रदीप]

पेट के रोग

(१) प्रतिदिन मट्ठा पीने से पेट के रोग दूर हो जाते हैं :

(२) यदि पेट में दर्द हो तो आप दो रत्ती हींग गर्म पानी से निगलिए।

(३) हींग नाभि पर रगड़िये और अजवाइन, काला नमक, भुना हुआ जीरा, भुनी हुई हींग इन सबको पीसकर गर्म पानी से लीजिए। आपका वायु गोला का दर्द कम होने लगेगा।

(४) हरड़, बहेड़ा, आँवला, काला नमक, सनाय की पत्ती इन सबका समान भाग लेकर चूर्ण बना लीजिए। आप इस चूर्ण को पर्याप्त नींबू के रस में घोटकर मटर के दाने के बराबर गोलियाँ बना लीजिए। सोते समय चार गोली गरम पानी के साथ खाइये, इससे पेट साफ रहता है और कब्ज दूर होती है तथा भूख भी अच्छी है।

(५) आप त्रिफला के पाँच माशे चूर्ण को रात्रि में पाव भर पानी में भिगो दें, प्रातःकाल त्रिफला को हाथ से अच्छी प्रकार मलकर पानी को कपड़े से छान लीजिए। इस पानी को पीने से हर प्रकार के पेट के रोग में लाभ पहुँचता है।

(६) आप त्रिफला चूर्ण को बाजार से खरीद लीजिए और इस त्रिफले के चूर्ण में थोड़ा सा बादाम रोगन अथवा देशी घी मिला लीजिये। आप इस चूर्ण को सोने से पहले प्रदिदिन गरम दूध के साथ लेंगे, तो आपके उदर (पेट) सम्बन्धी विकार शीघ्र नष्ट हो जायेंगे।

(७) सूखे आँवले के दस-बारह दाने रात्रि के समय पानी में भिगो दीजिए और प्रातःकाल उस पानी को पी लीजिए तथा आँवले को तवे पर जीरा, काली मिर्च आदि डालकर थोड़े से घी में भूनकर खाइये। यदि आप प्रतिदिन इस प्रकार प्रयोग करते हैं, तो मैं आपको अनेक रोगियों के अनुभव के आधार पर विश्वास

दिलाता हूँ कि आपका रोग दूर तो होगा ही, किन्तु साथ ही यह आँवला आपके बालों को भी लाभ पहुँचायेगा।

(८) लकड़ी के अंगार का चूर्ण बना लीजिए। इसके २ रत्ती चूर्ण को गुलाब जल के साथ सेवन कीजिए। पेट का अफारा शान्त हो जायेगा।

(९) सेंधा नमक, काली मिर्च, अजवाइन इनके चूर्ण को समान भाग में लेकर आप प्रतिदिन प्रातःकाल गर्म पानी के साथ सेवन कीजिए। यह पेट के रोग के लिए बहुत लाभदायक है।

(१०) सेंधा नमक के साथ आप अजमोद के चूर्ण को गर्म पानी से लीजिए, आपका पेट दर्द दूर हो जायेगा।

(११) आम की पत्तियों को पीसकर रस निकाल लीजिए तथा इसे पीजिए पेट का दद तुरन्त रुक जायगा।

(१२) सौंठ के चूण में जवाखार मिलाकर खाने से पेट का दर्द दूर हो जाता है।

(१३) दाल चीनी के तेल को नाभि के आसपास मलने से पेट का रोग दूर हो जाता है।

(१४) पीपल के दो कोमल पत्ते पीसकर थोड़े से गुड़ में मिलाकर खाइये इससे पेट दर्द में आराम पहुँचेगा।

(१५) पीपल के पके हुए फल को सुखाकर चूर्ण बना लीजिए, आप दस ग्राम चूर्ण को दूध के साथ खाइये, इससे कब्ज दूर हो जायेगी।

(१६) यदि आप पेचिस से परेशान हैं, तो बरगद की जड़ का छिलका छाया में सुखाकर पीस लीजिए। तीन-तीन ग्राम सुबह शाम चावलों के पानी से इसे खाइये, पेचिस में आराम पहुंचेगा।

(१७) यदि आप खूनी दस्त से परेशान हैं, तो आप बबूल के हरे पत्ते दस ग्राम पच्चीस ग्राम पानी में पीसकर उसे छान लीजिये। आप इस पानी को प्रातः व सायं तीन चार दिन तक लीजिए, खूनी दस्त बन्द हो जायेगा। भोजन के रूप में दही के साथ मूंग की दाल और चावल की खिचड़ी खाइये।

अभियान करने से प्रथम निश्चित दिशा का ज्ञान हो।
निश्चित मिलेगा लक्ष्य इक दिन गर सही प्रस्थान हो ॥

(१८) यदि आप वायु के गोला से परेशान हो रहे हैं, तो हल्दी एक ग्राम और लाहौरी नमक ½ ग्राम इन दोनों को पीसकर गरम पानी के साथ खाइये। आपके पेट का अफारा ठीक हो जायेगा।

मन्दाग्नि और अजीर्ण नाशक नुस्खे

(१९) यदि आप मन्दाग्नि से, अजीर्ण से परेशान हैं, तो सौंठ और धनिया एक-एक तोला ले लीजिये। आप आधा सेर पानी में इसे डालकर खूब औटाइये, जब यह पानी आधा पाव रह जाये, तब इस पानी को रोगी को पिलाइये।

(२०) सेंधा नमक, सौंठ, पीपल, हींग इन सबको समान मात्रा में लेकर पीस डालिये इसका लेप नाभि के आसपास करने से मन्दाग्नि तथा अजीर्ण रोग दूर हो जाता है।

(२१) अलग-अलग अजवाइन और सेंधा नमक पीस लीजिये, फिर चार आने भर अजवाइन और दो आने भर नमक लेकर गरम पानी से फाँक लीजिये। इसके सेवन से मन्दाग्नि और अजीर्ण दूर हो जाते हैं।

(२२) अदरक और नमक को मिलाकर यदि प्रतिदिन खाया जाये तो जठराग्नि तीव्र हो जाती है।

(२३) पीपल, हरीतकी, काला नमक इन सब को पीस लेना चाहिये। पीपल हरीतकी तीन भाग हो और नमक एक भाग हो इसके सेवन से मन्दाग्नि दूर हो जाती है।

(२४) प्रतिदिन प्रातःकाल आधा तोला अदरक के साथ आधा तोला सेंधा नमक पीसकर मिला लीजिये और इसे थोड़ा गुन-गुना करके खाइये, इससे मन्दाग्नि और अजीर्ण दूर हो जाते हैं।

(२५) १५-१६ कचनार के फूल को आधा किलो पानी में उबालिये और जब पानी आधा पाव रह जाये, तब उस पानी को पी लीजिये। यदि आप इस प्रयोग को लगातार करते रहेंगे, तो आप जल्दी ही मन्दाग्नि रोग से मुक्त हो जायेंगे।

(२६) सेंधा नमक, अदरक नींबू के रस में मिलाकर प्रतिदिन सेवन करने से मन्दाग्नि दूर हो जाती है।

दृढ़ संकल्पों के बल से अभिलाषा पूरी होती।
हिमकर की झिलमिल किरणों से रजनी शोभित होती।।

(२७) सौंठ और धनिया का काढ़ा बनाकर पीजिये, इससे जठराग्नि तीव्र हो जाती है।

(२८) सौंठ के चूर्ण को आप गुड़ के साथ प्रतिदिन सेवन कीजिये, आपकी जठराग्नि तीव्र रहेगी।

(२९) सौंठ, सेंधा नमक और भुनी हींग का चूर्ण इन सबको मिलाकर गरम जल के साथ सेवन कीजिए, इससे अजीर्ण रोग का नाश हो जाता है।

पुराने रोगियों को ध्यान देने योग्य बातें :—

(३०) यदि आप कब्ज के रोग से परेशान हैं तो आप सबसे पहले अपने पेट की सफाई कीजिये। आपको यह सदा ध्यान रखना चाहिये कि कब्ज के कारण बवासीर, दमा, खांसी, सिर दर्द आदि भयानक रोग हो जाते हैं और धीरे-धीरे स्मृति क्षीण होने लगती है। पेट को साफ करने के लिये आप इस फार्मूला पर ध्यान दीजिये।

५०० ग्राम पालक, आधा किलो हरा धनिया, आधा किलो गाजर, ३०० ग्राम टमाटर, १०० ग्राम अदरक ३०० ग्राम शलजम पत्तों सहित इन सब को बारीक-२ काट कर दो किलो पानी के साथ मंद आँच में बालिये। जब लगभग एक किलो पानी जल जाये, तब आप इस पानी को किसी मोटे कपड़े से खूब अच्छी प्रकार छान लीजिये। फिर उसमें थोड़ा नमक, भुना पिसा जीरा मिलाकर तथा दो तीन नींबू का रस मिलाकर उस छने हुए अर्क को खाली पेट पीजिये। दिन में तीन चार बार इस पानी को भूख लगने पर पीते रहिये। इस बीच में और कुछ न खाइये। इसके प्रयोग से पेट की सफाई होती है तथा साथ ही शक्ति भी प्राप्त होती है। शरीर से जुकाम रोग भाग जाता है और शरीर में हल्कापन अनुभव होने लगता है। दूसरे दिन पतली मूंग की दाल बनाकर खायें और थोड़ा बहुत फल भी साथ खाइये। यदि आप पेट को सदा ठीक रखना चाहते हैं तो भोजन के साथ कम से कम १०० ग्राम सलाद अवश्य खायें। इस क्रिया को आप महीने में दो बार छुट्टी के तीन महीने तक करते रहिये। प्रतिदिन प्रातःकाल आधा किलो पालक को डेढ़ पाव पानी में खूब उबाल लीजिये और उस पानी में थोड़ा सा नमक, भुना जीरा मिलाकर पी लीजिये। पालक की बची हुई लुग्दी को भोजन के साथ खायें। इस

धनुष से छूटा तीर यथा फिर कभी न वापिस आता।
अपमानित अपमान कभी भी, तथा भुला ना पाता॥

प्रकार पालक का प्रयोग आपके पेट को ठीक रखेगा तथा चेहरे पर रौनक पैदा करेगा।

विभिन्न रोगों पर सरल नुस्खे :—

ज्वर रोग :—(१) ज्वर में भोजन छोड़ना लाभदायक है। वृद्ध दुर्बल व्यक्ति, गर्भिणी इन्हें उपवास नहीं करना चाहिये। (२) पानी को गरम करके मिट्टी के बरतन में रख देना चाहिये। प्यास लगने पर इसी पानी को पिलाना चाहिये। (३) यदि रोगी को बहुत प्यास लग रही हो, तो आप मोथा, लाल चन्दन, बाला, सौंठ, श्वेत पापड़ा इन सब की थोड़ी मात्रा लेकर ४ किलो पानी में डालकर इन्हें खूब औटाइये और जब दो किलो पानी रह जाये, तब उतार कर छान लेना चाहिये। इस जल को पिलाने से प्यास बुझ जाती है। (४) यदि रोगी बुखार में जलन से परेशान है, तो दो तोले धनिये को १२ तोले पानी में रात्रि के समय भिगो दीजिए और उस पानी को प्रातःकाल छानकर चीनी में मिलाकर रोगी को पीने के लिये दीजिए।

चिकित्सा :— १) निम्ब फल, पीपर, शुद्ध मैनसिल इन सबका समान भाग लेकर चूर्ण बना लीजिए। इस चूर्ण को करेले के रस में घोटकर गोली बनाकर रख लीजिए। इस गोली को गुलाब जल में घिसकर आंखों में लगाने से चौथिया ज्वर में लाभ पहुंचता है।

(२) यदि कोई रोगी मलेरिया से परेशान है, तो नीम की छाल के काढ़े में धनिया और सौंठ का बराबर भाग चूर्ण मिलाकर उबाल लीजिए। इस काढ़े को पिलाने से आशातीत लाभ पहुंचता है।

(३) लौंग ५ रत्ती, सौंठ १५ रत्ती, दालचीनी १५ रत्ती। इन सबको २० मिनट उबालिए। जब यह पानी ठण्डा हो जाये, तब ६० ग्राम पानी में शहद मिला कर रोगी को दीजिए। इससे इन्फ्लुएंजा दूर हो जाता है।

(४) तुलसी के ६ पत्ते और काली मिर्च ६ दाने। इन दोनों को पीसकर गोली बना लीजिये। मलेरिया में यह गोली लाभदायक है।

जैसा अन्न मनुज खाता है, मन वैसा बन जाता।
अवगुण द्रष्टा मनुज कभी, सद्गुण ना लख पाता ।।

(५) पीपल एक तोला इसे आधे किलो पानी में खूब ओटाइये जब पानी का $\frac{3}{?}$ भाग रह जाये तब पानी ठन्डा करके रोगी को पिला देना चाहिये। इससे वात-कफ ज्वर में लाभ पहुंचता है।

(६) १ तोला कुटकी और एक तोला चीनी इन दोनों का जल के साथ सेवन करने के पित कफ ज्वर नष्ट हो जाता है।

सिर दर्द की दवा :—

(१) यदि सर्दी के कारग सिर में दद है, तो तुलसी के पत्तों की चाय बना कर पीजिए, दर्द दूर हो जायेगा।

(२) यदि दर्द गर्मी के कारण है, तो सौंफ के अर्क में मिश्री मिलाकर पीजिये, तो दर्द दूर हो जायेगा।

(३) यदि गर्मियों के दिनों में सिर में दर्द हो रहा हो, तो प्याज को बारीक पीसकर तलवे पर मलिए, दर्द दूर हो जायेगा।

(४) यदि पेट की खराबी के कारण से किसी भी मौसम में सिर में दर्द हो जाता है, तो आप एक पाव ताजे पानी में एक चम्मच मीठा सोड़ा मिलाकर लीजिए।

कान का बहना :—

(१) १ तोला सरसों का तेल गरम कर लीजिए। फिर उस गरम तेल में ६ माशे बोरिक एसिड़ मिला लीजिये कान में दो-तीन बूंद रोज डालिए, कान का बहना दूर हो जायेगा और कान का दर्द भी दूर हो जायेगा।

(२) भुनी हुई फिटकरी ३ माशे लेकर खूब पीस लीजिये और इसके चूर्ण को शहद में मिला लीजिए। रुई के फाह को उसमें डुबोकर कान के छिद्र के पास रख दीजिये, इससे कान का बहना बन्द हो जाता है।

(३) पहले कान को रुई से साफ कर लीजिये, फिर कान में दो-तीन बूंद

स्प्रिट तीन-चार दिन तक डालिए। यह कान के बहने के रोकने के लिए बहुत ही अच्छी दवा है।

(४) २०० ग्राम सरसों के तेल में १० ग्राम रतन जोत को अच्छी प्रकार पका लीजिये। फिर इस तेल को छानकर शीशी में रख लें। प्रतिदिन रात्रि के समय कान में तीन-चार बूंद इस तेल को डालिए। कान का बहना. ऊंचा सुनाई देना, कान में दर्द होना, इन सब अवस्थाओं में यह तेल लाभ पहुँचाता है।

खांसी रोग :—

(१) काकड़ा सिंगी पीपल इन दोनों की समान मात्रा लेकर चूर्ण बना लीजिए। इस चूर्ण को शहद में मिलाकर चाटने से बहुत लाभ होता है। खासकर यदि दुधमुहे बच्चों को कुछ समय तक प्रयोग कराया जाये, तो बच्चे के स्वास्थ्य में निखार आ जाता है। यदि श्वास में खराह- हो, तो इस प्रकार की काली खांसी के लिये यह दवा बहुत मुफीद है।

(२) काकड़ा सिंगी, एक तोला, मुलहठी ३ माशे, ११ मुनक्के के दाने इन सब को खूब बारीक पीस लीजिए। इस चूर्ण को ५ तोले शहद में मिलाकर रख लें। इसे बार-बार बच्चे को चटाइये और सीने की खरखराहट तथा खांसी को भगाइये।

(३) पुरानी खांसी और काली खांसी को दूर करने के लिए इस फार्मूले को एक बार प्रयोग करके देखिए, आपकी खांसी भागती हुई नजर आयेगी। काकड़ा सिंगी भुनी हुई सौंठ अधभुनी, पीपला मूल इन सबको एक-एक तोला ले लीजिए। इन्हें कूटकर चूर्ण बना लीजिए। फिर इस चूर्ण को ९ तोले शहद में मिलाकर दिन में ५-६ बार चाटिए।

(४) यदि आप सूखी खासी से परेशान हैं तो आप इस नुस्खे का प्रयोग अवश्य कीजिये। पिस्ते के फूल और बलेले के फूल इन दोनों को समान मात्रा में लेकर बारीक पीस लीजिए। और इस चूर्ण को अदरक के रस में गूंदकर गोली बना लीजिए तथा खांसी आने पर चूसिए।

अन्याय सहन कर जीने से मरण-योग सुन्दर है।
पर रचित महल में रहने से निज कुटिया सुन्दर है॥

(५) हर प्रकार की खांसी के लिये आप इस नुस्खे को प्रयोग करके देखिये, कितना लाभ पहुँचता है ? पीपल छोटी १ तोला, आँवला एक तोला। इन दोनों को पीस डालिए फिर कपड़छान करके इस चूर्ण को शहद में मिलाकर गोली बनाकर रख लीजिए अथवा इनके चूर्ण का शहद मिलाकर चाटिये।

(६) केले के पत्ते को लेकर छाया में सुखा लें। फिर इसे उपले की आग पर जला डालिये। इसके भस्म को शहद के साथ चाटिए, खाँसी भाग जायेगी।

दाद रोग—(१) यदि आप दाद से बहुत परेशान हैं, तो आप शीशम की गीली लकड़ी को लेकर आग पर जलाइये। उस जलती हुई लकड़ी के पिछले भाग से झाग सा निकलता है। अब इस झाग को कुछ दिन तक दाद पर लगाइये दाद ठीक हो जाती है

(२) दाद के ऊपर अंजीर का दूध लगाइये दाद में लाभ पहुंचेगा। यदि आप बहादुर टाइप के आदमी हैं, मेरा मतलब है कि आप जलन से घबराते नहीं हैं, तो आप मदार का दूध दाद पर लगाइये; दाद नष्ट हो जाती है।

(३) पोस्त और रीठा को पानी में घिसकर दाद पर लगाइये लाभ पहुंचेगा।

(४) मूली के बीज को नींबू के रस में घोट लीजिए और जब अच्छी तरह घुट जाये, तो गोली बनाकर रख लीजिए। नींबू के रस में गोली को घिस करके दाद पर लगाइये बहुत जल्दी आराम पहुंचेगा।

दन्त दर्द—आदमी दाँत के दर्द से बहुत परेशान हो जाता है। मैं कुछ आपको अनुभूत योग बता रहा हूँ। मैंने इन योगों का प्रयोग अनेक लोगों पर किया है। मुझे कभी निराश नहीं होना पड़ा। आप भी प्रयोग कीजिए।

(१) अदरक और नमक पीसकर दर्द वाले स्थान के नीचे रखिये।

(२) कपूर को दाढ़ के नीचे दबाकर रखिये दर्द कम हो जायेगा।

(३) तुलसी और काली मिर्च को पीसकर दाँत के नीचे दबाइये।

तलवारों का घाव सुनिश्चय एक दिवस भर जाता।
अपमान असि का घाव परन्तु कभी नहीं भर पाता।

(४) आक की लकड़ी जलाकर जिस स्थान पर दर्द हो रहा है, उस स्थान पर रखिये दर्द धीरे-धीरे ठीक हो जायेगा।

दन्त मंजन—(१) यदि आप दाँत को चमकदार बनाना चाहते हैं, तो आप उनका मंजन बनाकर रख लीजिए। समुन्दर झाग १ तोला, फिटकरी भुनी हुई ६ माश, चूना बुझा हुआ ६ माशे। इन सबको पीसकर कपड़छान कर लीजिए।

पायरिया का मंजन—तूतिया भुना हुआ तीन तोला, फिटकरी फूला ३ तोला, गेरु तीन तोला, माजुफल २ तोला, इन सबको पीसकर कपड़ छान कर लीजिये।

चमत्कारी मंजन—नीम के बीज एक तोला, लाहौरी नमक एक तोला, फुलाई हुई फिटकरी एक तोला, लकड़ी का कोयला तीन तोला। इन सबको पीसकर कपड़छान कर लें और थोड़ा सा पीपरमेन्ट मिला लीजिए और यदि आप सुगन्धि चाहते हैं, तो २० छोटी इलायची भी साथ में पीस लीजिये।

नारी

संकलक—लोकेन्द्र कुमार विद्यारत्न

नारी केवल मांसपिंड की संज्ञा नहीं है। आदिमकाल से आज त.. विकास-पथ पर पुरुष का साथ देकर, उसकी यात्रा को सफल बनाकर, उसके अभिशापों को स्वयं झेलकर और अपने वरदानों से जीवन में अक्षय शाक्त भरकर, मानवी ने जिस व्यक्तित्व, चेतना और हृदय का विकास किया है उसी का पर्याय नारी है।

—महादेवी वर्मा

× × × ×

नारी के जीवन का संतोष ही स्वर्ण-श्री का प्रतीक है।

—डा० रामकुमार वर्मा

× × × ×

मनुष्य की दृष्टि होती है और नारी की दिव्य दृष्टि।

—विक्टर ह्यूगो

× × × ×

नारी की करुणा अंतर्जगत् का उच्चतम विकास है, जिसके बल पर समस्त सदाचार ठहरे हुए हैं। —जयशंकर प्रसाद

× × × ×

पवित्र नारी का अपमान संसार में क्रान्ति का अग्रदूत है।

—डा० रामकुमार वर्मा

× × × ×

मुक्त करो नारी को मानव चिर-वन्दिनी नारी को।
युग-युग की निर्मम कारा से जननी सखी प्यारी को॥

—सुमित्रानन्दन पन्त

× × × ×

सोना ही सब कुछ जगती में नहीं मनुज का होता।
यदि स्नेह से हृदय न पूरित हरदम ही दुःख होता।,

नर-कृत शास्त्रों के बन्धन हैं सब नारी को लेकर।
अपने लिए सभी सुविधाएँ पहले ही कर बैठे नर ॥

—मैथिलीशरण गुप्त

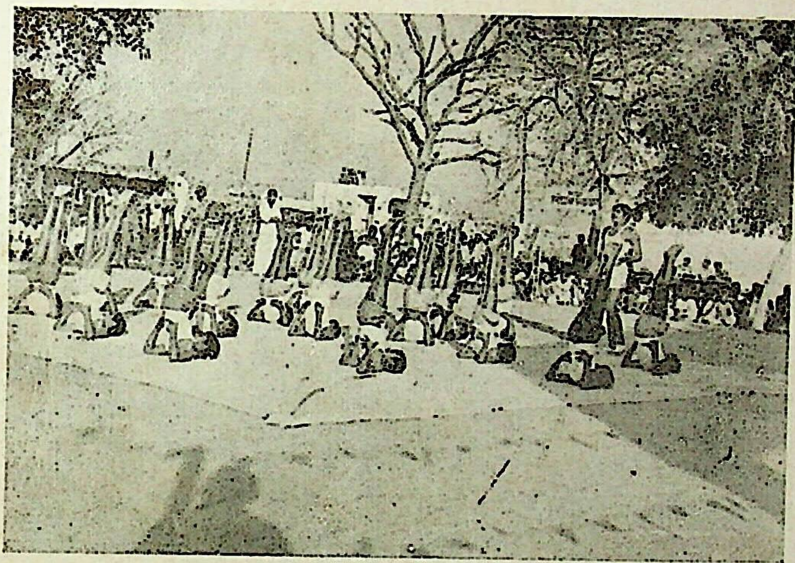
× × × ×

तुम भूल गये पुरुषत्व-मोह में कुछ सत्ता है नारी की।
समरसता है सम्बन्ध बनी अधिकार और अधिकारी की ॥

—जयशंकर प्रसाद

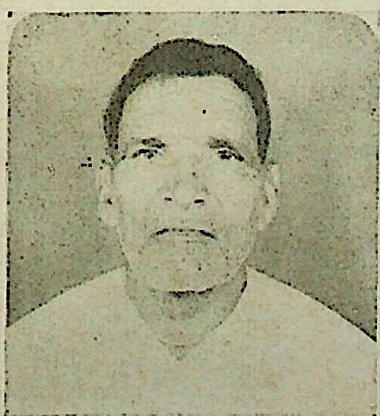


सामूहिक व्यायाम प्रदर्शन



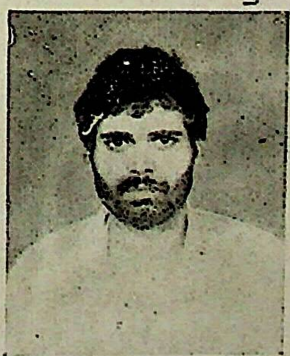
—ब्रह्मचारी आसन करते हुए

कुश्ती प्रशिक्षक



श्री प० श्यौसिंह आर्य

कर्मठ कार्यकर्त्ता



श्री इन्द्रदेव आर्य

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर
की
प्रवेश नियमावली

१. छात्रों का प्रवेश गुरुकुल के वार्षिकोत्सव के समय तथा शिक्षा के नवीन सत्र के प्रारम्भ में होता है। विशेष परिस्थितियों में इसके अतिरिक्त समय में भी प्रवेश हो सकता है।

२. कोई भी अभिभावक आने के पूर्व गुरुकुल से पत्र व्यवहार करें। जिसमें अपनी योग्यता, आयु तथा छात्र की विषय पढ़ने की रुचि के साथ आप भी उसे किस दिशा में ले जाना चाहते हैं लिखें।

३. प्रवेश के समय बच्चे की योग्यता कम से कम कक्षा पाँच उत्तीर्ण तथा आयु १०, १२ वर्ष के बीच होनी चाहिए। उत्तीर्ण कक्षा की टी० सी० लाना आवश्यक है।

४. छात्र को अनुशासन में रहते हुये सम्पूर्ण दिनचर्या का पालन दृढ़ता से करना आवश्यक है।

५. प्रवेश के समय छात्र का आवश्यक सामान :

(१) वेश-भूषा—सफेद दो कुर्ते, दो कटिवस्त्र, (बड़े छात्र धोती) दो बनियान, दो लाल लंगोट, दो पीले कुश्ती के कच्छे, एक केशरिया तौलिया तथा ऋतु अनुकूल बिस्तर।

(२) पात्र—१ थाली, १ कटोरी, १ गिलास, १ चम्मच, १ लोटा या कमण्डल, २ किलो घी, २ किलो मीठा, १ पाव सरसों का तेल, १ छोटा सा ट्रंक।

६. प्रवेश के समय १०१) प्रवेश शुल्क, १२) क्रीड़ा शुल्क लिया जाता है। ३०) मासिक भोजन शुल्क के हिसाब से तीन मास का एक साथ लिया जाता है। यह धन पुनः वापस नहीं किया जाता है।

अनुचित-उचित निकष मानव का पावन मानस होता ।
संशय पल में सचमुच मानस है निर्णायक होता ॥

७. दूध, घी, मीठा, पुस्तक, तेल वस्त्र आदि व्यय हेतु आवश्यकतानुसार संरक्षक के पास एक खाता खोला जाता है जिसका हिसाब प्रतिमास पहली तारीख को हो जाता है ।

वेदारम्भ संस्कार—आषाढ़ पूर्णिमा (गुरु पूर्णिमा) संस्था के स्थापना वर्ष पर सभी नवीन छात्रों का वेदारम्भ संस्कार किया जाता है । उसमें जो व्यय हो वह अभिभावक ही वहन करेगा ।

मान्यता

इस गुरुकुल को सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी द्वारा व्याकरण विषय में शास्त्री तथा आचार्य तक मान्यता है । श्रीमद् दयानन्द आर्ष विद्यापीठ गुरुकुल झज्जर से भी सभी विषयों में आचार्य पर्यन्त मान्यता प्राप्त है । उन्हीं के अनुसार पाठ्यक्रम चलता है जो परीक्षायें सरकार द्वारा मान्य हो चुकी हैं :

१. प्रथमा	कक्षा	८	समकक्ष	जूनियर हाई स्कूल	३ वर्ष समय
२. पूर्वमध्यमा	"	१०	"	हाई स्कूल	२ वर्ष समय
३. उत्तरमध्यमा	"	१२	"	इन्टर	२ वर्ष समय
४. शास्त्री	"	१४	"	बी० ए०	२ वर्ष समय
५. आचार्य	"	१६	"	एम० ए०	३ वर्ष समय
					१२ वर्ष योग

शिक्षण

१. संस्था में वेद, व्याकरण, दर्शन साहित्य, हिन्दी, गणित, सामाजिक विषय, अंग्रेजी, विज्ञान आदि शिक्षण का उत्तम प्रबन्ध है । इसके साथ ही आर्य सिद्धान्त, उपनिषद्, संस्कार विधि आदि सभी विषयों का उच्च अध्ययन अनुभवी आचार्यों द्वारा कराया जाता है ।

खोए बिना जग में मानव को, कभी नहीं अनुभव मिलता।
चन्दन के घिस जाने पर फिर, सौरभ स्वयं निखरता॥

दिनचर्या

ग्रीष्म कालीन :—

प्रातः ४ बजे जागणम्

४ से ४-४५ तक प्रार्थना, शौच दन्तधावन

४-४५ से ५-३० तक व्यायाम आसन

५-३० से ६-०० तक सफाई, स्नान

६-०० से ७-०० तक सन्ध्या, यज्ञ प्रातःराश

७-०० से १२-०० तक विद्यालयः*

१२-०० से २-०० तक भोजन विश्राम

२-०० से ४-०० तक विद्यालयः

४-०० से ५-३० तक शौच, श्रमदान (कार्य)

५-३० से ६-०० तक व्यायाम, खेल

६-०० से ७-०० तक स्नान, सन्ध्या, यज्ञ

७-०० से ८-०० तक भोजन, भ्रमण

८-०० से ९-०० तक पाठ स्मरण मन्त्र पाठ

९-०० से ४-०० तक शयन

शीत कालीन :—

प्रातः ४ बजे जागणम्

४ से ४-४५ तक प्रार्थना, शौच; दन्त धावन

४-४५ से ५-३० तक व्यायाम, स्नान

५-३० से ७-०० तक पाठस्मरण, (मौन)

७-०० से ७-३० तक संध्या, यज्ञ

७-३० से ९-०० तक पाठस्मरण, सफाई

९-०० से १०-०० तक भोजन, विद्यालय सज्जा

१०-०० से ४-०० तक विद्यालयः

४-०० से ५-३० तक शौच कार्य व्यायाम, स्नान

५-३० से ६-०० तक यज्ञ, सन्ध्या

६-०० से ७-०० तक भोजन, भ्रमण

७-०० से ९-०० तक पाठ स्मरण-मन्त्र पाठ

९-०० से ४-०० तक शयन

* विद्यालय का समय विभाग आचार्य जी बनाते हैं और उसी के अनुसार पाठ चलते हैं। कभी विशेष परिस्थितिवश कहीं-२ परिवर्तन भी सम्भव है।

प्रेरणा (स)

बिना चोट खाए मानव की, आँख नहीं खुलती है।
संघर्षों के बिना कभी क्या कहीं विजय मिलती है ॥

पृथक्करण

१. जो छात्र गुरुकुल के नियमों का यथावत् पालन नहीं करेगा अथवा उसमें किसी प्रकार का कोई दोष पाया जायेगा तो उसे गुरुकुल से तत्काल पृथक करने में प्रधानाचार्य महोदय विशेषाधिकृत होंगे।

२. भोजन व्यय समय पर न देने पर ब्रह्मचारी के संरक्षक (अभिभावक) को सूचना दी जायेगी। एक मास की प्रतीक्षा के वाद व्यय न भेजने पर ब्रह्मचारी को पृथक् कर दिया जायेगा।

अभिभावकों के लिये निर्देश

१. छात्र के पिता को प्रवेश के समय अथवा उत्सव से पूर्व गुरुकुल की प्रवन्ध समिति का साधारण सदस्य बनना अनिवार्य है। जिसका शुल्क २५) वार्षिक है।

२. गुरुकुल में छात्र से वे संरक्षक की अनु॰ति से ही मिल सकते हैं।

३. बालक की माता या बहन मिलना च हें तो वार्षिक उत्सव अथवा स्थापना दिवस पर ही मिल सकेंगी। विशेष परिस्थितिवश दिन में १२ बजे अवकाश के दिन भी मिल सकेंगी।

४. यदि छात्र किसी अवस्था में भाग जाता है अथवा बिना पूछे चला जाता है तो उसके लिए गुरुकुल में स्थान नहीं है। यदि अभिभावक पुनः प्रवेश कराना चाहें तो पूर्ण शर्तों के साथ पुनः प्रवेश शुल्क लिया जायेगा।

५. छात्र को यदि अभिभावक समय पर आवश्यक सामान न दे सकेगा तो उसकी पूर्ति खाते से की जायेगी।

६. छात्र के भागने पर आपको पत्र से सूचना दी जायेगी। यदि तीन दिन तक छात्र वापस न आया तो उसकी अस्वीकृति समझी जावेगी। ऐसी अवस्था में पुनः धारा नं० ४ का प्रयोग किया जायेगा।

७. यदि अभिभावक छात्र के लिये गुरुकुलीय नियमानुकूल कोई भोज्य पदार्थ

अनुभव-शिक्षालय में नर सत्य-ज्ञान गहता है।
शब्द-भंवर में फँसकर मानव, बोध दृष्टि तजता है॥

लाते हैं तो वह संरक्षक की आज्ञा से सभी को वितरण करके कुल परिवार मिलकर खा सकते हैं।

अनध्याय या अवकाश

१. गुरुकुल में विद्यालय का अवकाश प्रत्येक अष्टमी और प्रतिपदा को होता है। इसके अतिरिक्त विशेष पर्व और त्यौहारों पर राजकीय नियमानुसार प्रधानाचार्य की आज्ञा से अवकाश हो जाता है।

२. उन दिनों यदि छात्र घर जाना चाहेगा तो उसे लिखित रूप से स्वीकृति लेनी होती है। यदि छात्र नियत दिन विद्यालय में उपस्थित न हुआ तो कारण सहित क्षमा के साथ १) प्रतिदिन के हिसाब से दण्ड देना होगा।

३. छात्र को अवकाश में ले जाने के लिए वे ही आयेंगे जो प्रविष्ट कर गये हैं; अन्य व्यक्तियों के साथ केवल पिता के प्रार्थना पत्र गवाह सहित होने पर ही उसकी जिम्मेदारी पर भेज सकते हैं।

४. अन्य किसी भी परिस्थिति या समय में अवकाश नहीं होता है।

परीक्षा विवरण

वर्ष में परीक्षायें तीन बार होती हैं—१. त्रयमासिक, २. अर्द्धवार्षिक, ३. वार्षिक। इन परीक्षाओं की व्यवस्था प्राचार्य महोदय स्वयं करते हैं। गत वर्ष जो परीक्षायें हुई हैं उनका विवरण एव परिणाम इस प्रकार है—

क्रम	नाम कक्षा	छात्र संख्या	परीक्षा उप० संख्या	उत्तीर्ण संख्या
१.	आचार्य	४	४	४
२.	शास्त्री	१५	[illegible]	६
३.	मध्यमा	३४	३०	२८
४.	प्रथमा	८	५	५
५.	प्रथमा	५	५	५
६.	निम्न प्रथमा	२२	२२	१४

अनुभूति की महा-विभूति जिस मनुज पास है होती।
सचमुच उस मानव की जग में, सदा प्रतिष्ठा होती॥

इस वर्ष जो वार्षिक परीक्षा में छात्र सम्मिलित हो रहे हैं उसका विवरण इस प्रकार है—

क्रम	नाम कक्षा	छात्र संख्या
१.	आचार्य	५
२.	शास्त्री	१३
३.	मध्यमा	३६
४.	प्रथमा (८)	३
५.	प्रथमा (७)	१५
६.	प्रथमा (६)	३२

अध्यापक वर्ग

१. श्री धर्मपाल आर्य विद्याभास्कर एम० ए० व्याकरणाचार्य (प्राचार्य)
२. श्री रवीन्द्र रवि आत्रेय व्याकरणाचार्य (उपाचार्य)
३. श्री सोमव्रत विद्याभास्कर एम० ए० साहित्याचार्य
४. श्री रामलाल शास्त्री विद्याभास्कर साहित्याचार्य
५. श्री महेन्द्र पाल आर्य एम० ए० बी० एड० साहित्यरत्न
६. श्री नेकपाल आर्य बी० एस० सी० साहित्यरत्न
७. श्री समरभानु आर्य विद्याभास्कर

कर्मचारी वर्ग

१. श्री इन्द्रदेव आर्य 'पथिक' सिद्धान्तभूषण
२. श्री ब्रजलाल आर्य

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर
प्रबन्धक समिति वर्तमान
अधिकारी एवं सदस्य

प्रधान— श्री रामसरन जी आर्य 'वानप्रस्थ'

उपप्रधान— डा० श्री विजय भूषण आर्य

प्रबन्धक— श्री म० नरपत सिंह आर्य

स० प्रबन्धक— श्री वेदानन्द आर्य

कोषाध्यक्ष— श्री म० भीकमसिंह

पुस्तकालय अ०—श्री डा० सत्यपाल आर्य 'वेदालंकार'

लेखा निरीक्षक—श्री म० छतरसिंह आर्य

सदस्य— श्री रघुवीर सिंह

श्री ओंकार सिंह

श्री श्योसिंह

श्री भगवान सहाय

श्री गंगासहाय

श्री सरूपसिंह

श्री बख्तावर लाल

श्री बाबूराम आर्य

श्री भवंर सिंह

श्री पं० करनसिंह

श्री शीशपाल आर्य

श्री मु० जाग्रत सिंह

श्री कैलाशचन्द्र आर्य

अनुराग बिना नर का जीवन उपल तुल्य बन जाता ।
जैसे गन्ध बिना गुल जग में, कभी न शोभा पाता ।।

सदस्य— श्री रार्मासह
श्री खच्छेडू सिंह
श्री शोराज सिंह
श्री होशियार सिंह
श्री बिजेन्द्र सिंह
श्री शीशराम शास्त्री
श्री आचार्य गुरुकुल

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर

❋ आर्यकुमार परिषद् विवरण ❋

गुरुकुल महाविद्यालय में आन्तरिक व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए, वाक्‌शक्ति को प्रोत्साहित करने के लिए, छात्रों में शारीरिक शक्ति में संवर्द्धन के लिये तथा लेख लिखने की भावना जाग्रत करने एवं समय-समय पर प्रतियोगिता का आयोजन करने की दृष्टि से प्राचार्य धर्मपाल जी शास्त्री ने १ अगस्त १९.४ को आर्य कुमार प·िषद् की स्थापना की तथा निम्न अधिकारियों को कार्य सौंप दिया ।

प्रधान—चन्द्रपाल शास्त्रो, मन्त्री—सुधाकर शास्त्री, कोषाध्यक्ष—नेकपाल आर्य ।

वष १९७४–७५ में व्यायाम प्रतियोगिता एवं १५ अधिवेशन हुए ।

१९७५–७६ में प्रधान—हरेन्द्र, मन्त्री—रामपाल, कोषाध्यक्ष—हरिकृष्ण । इस वर्ष १० बैठक तथा दो प्रतियोगिता हुईं ।

अन्याय सहन कर जीने से मरण-योग सुन्दर है।
पर रचित महल में रहने से निज कुटिया सुन्दर है॥

१९७६–७७ में प्रधान–रामवीर, मन्त्री–राजपाल, कोषाध्यक्ष—महेन्द्र पाल एम० ए०। इस वर्ष २१ बैठक तथा ३ प्रतियोगिता हुईं।

१९७७–७८ में प्रधान–रामेन्द्र, मन्त्री–रमेश आर्य, कोषाध्यक्ष–केशवदेव। इस वर्ष १९ बैठक तथा ३ प्रतियोगिता हुईं।

१९७८–७९ प्रधान–नरेन्द्र पाल, मन्त्री–दामवीर, कोषाध्यक्ष–अजयसिंह। इस वर्ष २० बैठक तथा ६ प्रतियोगिता हुईं हैं। जिनका विवरण इस प्रकार है :—

१. १५ अगस्त भाषण प्रतियोगिता :—

प्रथम–रामवीर सिंह, द्वितीय–नरेन्द्र पाल सिंह

२. व्यायाम प्रतियोगिता :—

	बालवर्ग	किशोर वर्ग	तरुण वर्ग
प्रथम—	शीलभद्र	अजय सिंह	कृपाल सिंह
द्वितीय—	शिवकुमार	धर्म प्रकाश	महेन्द्र सिंह
तृतीय—	ज्ञानेन्द्र पाल	केशवदेव	देवपाल आर्य

३. भाषण प्रतियोगिता :—

	बालवर्ग	किशोर वर्ग	तरुण वर्ग
प्रथम—	प्रणवदेव	ब्र० केशव देव	ब्र० कृपाल आर्य
द्वितीय—	शिवकुमार	" लोकेन्द्र	" रमेश चन्द्र
तृतीय—	शीलभद्र	" रवीन्द्र कुमार	" हरेन्द्र कुमार

४. राम प्रसाद बिस्मिल बलिदान दिवस १९ दिसम्बर :—

प्रथम— ब्र० नरेन्द्र कुमार, द्वितीय—ब्र० केशवदेव, तृतीय—ब्र० सुरेश चन्द्र

५. स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस २३ दिसम्बर :—

प्रथम—रमेश चन्द्र, द्वितीय—हरिकृष्ण, तृतीय—हरेन्द्र कुमार

६. गणतन्त्र दिवस २६ जनवरी :—

प्रथम—ब्र० हरिकृष्ण, द्वितीय—ब्र० केशवदेव, तृतीय—ब्र० ओमकुमार गोपाल प्रसाद।

इस प्रकार यह वर्ष आर्य कुमारों के लिये बड़े उत्साह का रहा है।

आग्रह-मुक्त मनुज ही जग में अन्वेषक हो सकता।
अनाग्रह का सुदीप सर्वदा पथ आलोकित करता॥

गत वर्ष एवं इस वर्ष ब्रह्मचारी आर्य समाजों के उत्सवों पर व्यायाम प्रदर्शनार्थ बाहर गये वहाँ से जितना पारितोषिक मिला एवं स० शुल्क से जो धन प्राप्त हुआ उसकी राशि २९७१/=रु० है। जिसका व्यय व्यायाम उपकरण-मार्गव्यय- पारितोषिक-सज्जा एवं वस्त्रों में किया गया है। इस समय कुल १७८-५५ धन शेष है।

भावी योजना :—

आगामी वर्षों में परिषद् की योजना है कि एक पक्का अखाड़ा एवं एक व्यायामशाला बनवाई जायेगी। इस प्रकार छात्रों के लिये यह एक उपयोगी कदम होगा। इस प्रकार आर्य कुमार परिषद् का भविष्य उज्ज्वल दिखाई देता है। परमात्मा हमें शक्ति और सात्विक बुद्धि दे जिससे अपने उद्देश्यों की पूर्ति कर सकें।

गुरुकुल महाविद्यालय ततारपुर

अन्नविवरण (दान)

ग्राम	कुन्तल	कि० ग्राम	गेहूँ
श्यामपुर	६	२५	"
अटौला	६	१५	"
खैपा	६	९६	"
भगवानपुर	५	६७	"
नवल	१	१७·५००	"
सूरजपुर		४७	"
लालपुर	१	९४	"
सीतादेई	३	३९	"
गढ़ी	२	·५०० ग्राम	"
पैंगा	१		"

अपयशमय जीवन-यापन से अच्छा है मर जाना।
घृणा-जन्य सुधा-पान से है अच्छा विष पीना ।।

ग्राम	कुन्तल		गेहूँ
गदाना	२		"
नंगला		२० कि०	"
बिछलौता		२० कि०	"
ततारपुर	१०	३० कि०	"
मानकचौक	२	४० कि०	"
हसुपुरा	१	६० "	"
बहलोलपुर	३		
दवथला	६		
खजूरी	६		
छपकौली	२	४५ कि०	
चितौली	४	६० कि०	
ढक्का	३		
पिलखुआ	७		
गन्दूनंगला	४	५० कि०	
लुहारी	२		
गोहरा	४		
अन्ती		१० कि०	

उपरोक्त सभी गाँवों के दान देने वाले महानुभावों को हार्दिक धन्यवाद।

गाँव	कुन्तल	कि०	चावल
अन्ती	१	२०	"
नारायण खेड़ी (बिजनौर)	४	...	मूंजी
शेखुपुरा	२	...	"
धनपुरा	...	५०	"
ऊमरी	...	७०	"
फलौदा	१	००	"
बालापुर	...	५०	"
गाजीपुर	१	५०	"
सदनपुर		३०	"

सभी चावल तथा मूंजी देने वाले महानुभावों को हार्दिक धन्यवाद।

प्रेरणा (ह)

महासभा के सदस्यों की सूची

आजीवन सदस्य

म० रघुवीर सिंह ततारपुर
श्रीकर्मसिंह ततारपुर
शान्ति देवी गोयल हापुड़
प्रेमसिंह सरधना
बाबू अनूपसिंह टिकोला कलां
अन्तराम सिंह माथाहेड़ी
वर्कसिंह ततारपुर
म० मद्यानन्द आर्य दिल्ली
डा० रणवीर सिंह सरधना
ला० मनोहरलाल पिलखुवा
मुन्शी जाग्रतसिंह खैया

पदेन सदस्य

३ प्रतिनिधि आर्य समाज हापुड़
प्रधान आर्य समाज अटोला
प्रधान आर्य समाज चितोली
आचार्य गुरुकुल ततारपुर
प्रधान आर्य समाज ततारपुर
प्रधान आर्य समाज धनोरा
प्रधान आर्य समाज चित्सोना
प्रधान ग्राम सभा ततारपुर
१ प्रतिनिधि श्री दयानन्द आर्ष वि० पीठ गुरुकुल झज्जर

वरिष्ठ सदस्य

नन्हेंसिंह भगवन्तपुर
भंवर सिंह कुतुबपुर
बालमुकुन्द शर्मा सिमरौली
श्री चौ० भगवन्त सिंह फतेहपुर
मा० ध्यानसिंह हसनपुर कलां

संरक्षक सदस्य

विजेन्द्र सिंह अटोला
कृष्णलाल दत्ता दिल्ली
रणवीरसिंह किशोरी
ब्रह्मदत्त शर्मा बाबूगढ़ छावनी

शालीन सदस्य

सुरेन्द्रपाल ततारपुर
निरंजनसिंह ,,
रामचरन ठेकेदार ततारपुर
प० श्योसिंह ,,

प्राण-त्याग को मृत्यु, जग में कायर ही कहता है।
सचमुच अपयश महामृत्यु है, कायर नित मरता है॥

सुखवीरसिंह	ततारपुर	भगवान सहाय	ततारपुर
सत्यपाल सिंह	"	वेदपाल विद्याभास्कर	"
जयदेव आर्य	"	प्रतिपाल सिंह	"
महरबान सिंह	"	हरपाल सिंह	"
जवरसिंह	"	नरपतसिंह	"
महावीर सिंह	"	ओंकार सिंह	"
गजपत सिंह	"	लल्लू सिंह	"
दरबार सिंह	"	महेन्द्रसिंह	"
यादराम सिंह	"	कालेसिंह	"
लल्लूसिंह	"	बिजेन्द्र सिंह	"
कुंवरपाल सिंह	"	सूरजमल	छपकोली
शिवचरण	छपकोली	सुखपाल सिंह	"
अमरीक	"	श्रीराम	"
कमरपाल	"	रामवीर	"
शिवचरण	"	शिवचरण	"
हरशरणदास ढिल्लन	"	गंगासरन	"
वेदपाल सिंह	"	गंगासिंह	"
रामचन्द्र	"	रामपाल	"
जगदीशपुरी	"	कैलाशपुरी	"
दयाराम शर्मा	"	म० छतरसिंह	"
श्योसिंह	दादरी	बिजेन्द्र सिंह	दादरी
महतेसिंह	"	लल्लूसिंह	"
कमरपाल	"	ब्रजपाल	"
ओमपाल	"	महेन्द्रसिंह	"
संतोषकुमार	"	गुरुदयाल	"
राजकुमार	"	श्रीचन्द	"

मृत्यु किसका नाम जगती में अपयशमय जीवन का।
जीवन किसको कहते सज्जन कीर्ति कलेवर जिनका ।।

निरंजनसिंह	दादरी	कालूसिंह	दादरी
रामस्वरूप	"	फूलसिंह	"
शिवचरण	"	सुधीरकुमार	खजूरी
चन्द्रदेव	खजूरी	कैलाशचन्द्र	"
नरदेव	"	सन्तकुमार	"
जयनारायण	"	जयप्रकाश	"
मूलचन्द	"	दिनेशकुमार	"
म० खजानसिंह	"	भीमसिंह	"
नरपत सिंह	श्यामपुर	शीशपाल सिंह	श्यामपुर
महावीर सिंह	"	गंगासरण	"
रणधीर	"	कमरपाल	"
महावीर	"	मंगतसिंह	"
रामशरण	"	हरिसिंह	"
पदमसिंह	"	नत्थसिंह	"
राजेन्द्र कुमार	"	रतनलाल	नर्सलघाट
नत्थीसिंह	नर्सलघाट	कैलाशचन्द्र	"
अंगनसिंह	"	नारायण सिंह	"
हरपाल सिंह	"	शंकरलाल	नयागाँव ख्वाजपुर
ला० मदनलाल	नाहल	विजयपाल	"
परसादीलाल	दौलतपुर	लक्ष्मीचन्द	ढकरौली
बलबीर सिंह	ढक्का	रामनिवास त्यागी	स्याना
बलदेव सिंह	"	रघुराज सिंह	बरहाना
		रामसिंह	बरहाना
चरणसिंह	"	खचेडू सिंह	ढूसरी
मा० शेरसिंह	"	राजेन्द्र खोसला	मेरठ
रिसालसिंह	कलीना	शीशराम शास्त्री	बहलोलपुर
महेन्द्रसिंह	"	आशाराम आर्य	"
मल्लूसिंह	मटौर	हरिसिंह	दबथला

मान सहित पल भर भी जीना सभी सुखों का घर है।
शत वर्षों अपमानित जीवन रौरव से बढ़कर है॥

ज्ञानसिंह	गालन्द	शिवराम आर्य	मतनौरा
कान्तीप्रसाद	पिलखुवा	श्याम बिहारी	बिजनौर
डिप्टी जयपाल	,,	सुखपाल आर्य	दिल्ली
रतनलाल	,,	नरोत्तमदास	अलीगढ़
व्रतपाल शास्त्री	खैंया	महेन्द्र सिंह	खैया
बीरपाल सिंह	अटौला	ओमपाल	बहलोलपुर
विजेन्द्र सिंह	,,	रामकिशन	,,
बलबीर सिंह	,,	सोमराज	गाजियाबाद
लालसिंह	गन्दूनंगला	महकार सिंह	हसनपुर
श्योराज सिंह	,,	चन्द्रभानु शर्मा	बाघोली
गजयसिंह	,,	लालसिंह	पैंगा
भोपाल सिंह	पैंगा	ईश्वर सिंह	,,
ओमवीर	,,	बन्धेश्वर आर्य	बिहार
महकार सिंह	जरौंठी	गंगासिंह	जरौंठी
तेजपाल	,,	वेदपाल	गन्दूनंगजा
सोरनसिंह	,,	बलवान सिंह	,,
रणवीर सिंह	,,	खुशीराम	,,
योगेश चन्द	बनखंडा	रमेशचन्द यादव	पूठी
हरिदत्त शर्मा	जड़ौदा नरा	हरकेशसिंह	,,
सरदार सिंह	बेगमाबाद	जगसरणसिंह	हसुपुरा
वेदप्रकाश	पतला	मेहरबान सिंह	,,
रणवीर सिंह	छबड़िया	महाराज सिंह	,,
गोविन्द सिंह	गाजीपुर	श्योराज सिंह	,,
शिवनाथ सिंह	,,	दलीपसिंह	,,
गुलाब सिंह	सदनपुर	टीकमसिंह	नारायणखेड़ी
देवशर्मा	दतियाना	पूरनसिंह	,,
तेजराम आर्य	खैंया	दीनानाथ शर्मा	दिल्ली
सत्यपाल वेदालंकार	सपनावत	ओमप्रकाश आनन्द	,,

जग में सबसे महाकष्ट क्या ? अपमानित हो जीना ।
सुख किसको सज्जन हैं कहते ? मान-सुध नित पीना ।।

घनश्याम सिंह	सपनावत	माँगेराम आर्य	अन्ती
रामशरण प्रधान	भगवानपुर	घोटनसिंह	गढ़ीना
गोबिन्दराम	दौलतराम	प्रेमनारायण	भदरोई
रामाधीन वर्मा	बुगरासी	ओमपालसिंह	मुरादपुर
तेजपालसिंह	मीरपुरकलां	दौलतराम	घुमैंड़ा
मीरसिंह	कुराना	रामावतार	निशरखा
ज्ञानचन्द	फहीमपुर	देवीदास	दिल्ली
लटूरसिंह	अन्ती	आ० नरेन्द्रदेव	सासनी
धर्मेन्द्र कुमार	बरनाहल	प्रदीपकुमार	राजपुर
शीशपाल सिंह	अटूटा	रणजीत शर्मा	बरकातपुर
राजकुमार	हापुड़	राजेन्द्र रस्तौगी	सिवहारा
रामस्वरूप आर्य	भवालपुर वांसली	लालसिंह	चोंटीपुरा
हरगोविन्द सिंह	चोंटीपुरा	डा० दिवाकरसिंह आर्य	भवालपुर
महताब सिंह	धामपुर	जयदेव सिंह	"
मीरसिंह	"	गोबिन्द सिंह	फलैदा
परमसिंह	"	तारासिंह	अवधपुरी
पूरनसिंह	"	खेमचन्द	बसावनगंज
प्रेमसिंह	"	हेमराज	बाजीदपुर
असरपाल सिंह	नौरंगी	महकारसिंह	मोढ़ा
कूड़ेसिंह	बारसपुर	खेमसिंह	सिहपुपसानी
बनवारीलाल	चकिया	चन्द्रपालसिंह *M.P.*	प्पसरा
उत्तमसिंह	जेवड़ा	जगरामसिंह	मण्डाला
ओमपाल सिंह	मल्लपुर खैया	महकारसिंह	फलैदा
महीलाल. सिंह	अमनीपुर	प्रो० सेवाराम	मुरादाबाद
जागरसिंह	लालपुर	तेजपालसिंह	सीतादेई
ब्रह्मसिंह	शकरपुर	हातमसिंह	भगवानपुर

तलवारों का घाव सुनिश्चय एक दिवस भर जाता।
अपमान असि का घाव परन्तु कभी नहीं भर पाता।

ओमप्रकाश	गदाना	मा० इकरामसिंह	हापुड़
सरदानन्द	हापुड़	खचेडूसिंह	धनौरा
आशाराम आर्य	सीतादेई	ताराचन्द आर्य	मुक्टेशरा
द्वारिका प्रसाद	बाबूगढ़	जगदीशचन्द शर्मा	अटूटा
डा० नन्दलाल	बाबूगढ़ छावनी	सूबेदार धर्मवीर	"
जमुनास्वरूप	सिमरौली	आनन्दपालसिंह	बागड़पुर
चरनसिंह	बछलौता	वैद्य रामफल	सिम्भावली मिल
ओमवीर सिंह	शाहपुरा	भागसिंह	लोटी
छिद्दासिंह	परीक्षतगढ़	बाबू खुशीराम	ददायरा
सत्यवीर आर्य	"	रामविलास	ददायरा
भीकौसिंह	हापुड़	प्रमोदनसिंह	मुरादपुर
बलराजसिंह	बिगास	रिछपालसिंह	धनौरा
टीकमसिंह	"	नरपतसिंह	"
टीकमसिंह	ददायरा	रघुनाथसिंह	"
पं० शोभाराम	दोमयी	म० भोपालसिंह	पूठड़ी
शिवचरण	"	शिवचरन शर्मा	बाबूगढ़
शिवचरण	मलकपुर	विश्वपाल आर्य	बढ़ला
बलबीरसिंह	पावटी	आचार्य रमेशचन्द शास्त्री	खेड़ाखुर्द
विश्वपाल आर्य		बलबीर सिंह	
हरप्रसाद पथिक		विजयपालसिंह	
प्रतिपाल सिंह		प्रेमसिंह आर्य	
प्रेमसिंह नागर		भंवरसिंह	
बाबूराम आर्य			

* दानदाता सूची *

अप्रैल १९७८ से फरवरी १९७९ तक

म० हरीसिंह	१००१)	डिप्टी जयपाल सिंह	४००)
चौ० समयसिंह	२०१)	प्रधान ओमकार सिंह S/O श्यामसिंह	२५१)
भगवान सहाय	१५१)		
चौ० गोबिन्द सिंह	१२१)	म० नरपत सिंह	१११)
आर्य समाज नर्सलघाट	१०६)	गौरीदत्त	१०५)
चौ० समरपाल	१०५)	रणवीर सिंह	१०१)
मु० गंगासहाय	१०१)	ऋषिपाल	१०१)
रतनलाल	१०१)	श्योसिंह	१०१)
मेहरबान सिंह	१०१)	ला० बाबूराम	१०१)
मा० भींकमसिंह	१०१)	कोहरसिंह	१०१)
नेत्रपाल सिंह	१०१)	जगन्नाथ वाली	१०१)
ओमप्रकाश	१०१)	भंवर सिंह	१०१)
श्योराजसिंह प्रिंसिपल	१०१)	सरदार चन्दनसिंह	१००)
सन्तलाल	१००)	निरंजन	५१)
महीपाल	५१)	ऋषिपाल	५१)
नरेन्द्रपाल	५१)	पं० धन्नतर	५१)
जन्मसिंह	५१)	हरप्रसाद	५१)
बलराज	५१)	सत्यपाल	५१)
चौ० गजराज	५१)	प्रधान रामशरण	५१)
हरमेर सिंह	५१)	लल्लूसिंह	५१)
प्रतापसिंह	५१)	चरनसिंह	५१)

अन्यायी का बल बढ़ता। अन्याय सहन करने से।
इसीलिए प्रतिकार उचित उसके पहले बढ़ने से॥

चन्द्रभानु	५१)	रामसिंह	५१)
जयपाल	५१)	जयवीर	५१)
दलेलसिंह	५१)	गंगासरन	५१)
श्रद्धानन्द	४२)५०	श्योसिंह	४०)
आर्य समाज फतहपुर	३१)	रामफल	३०)
म० छतरसिंह	२५)	ओमपाल	२५)
रामसिंह	२१)	खचेडू सिंह	२१)
दिलावर सिंह	२१)	सत्यवीर सिंह	२१)
रामकेश	२१)	कालेसिंह	२१)
श्योसिंह	२१)	लल्लूसिंह	२०)
पवन	२१)	ऋषिपाल	२१)
नत्थीलाल	२०)	शीशराम	२०)
जागरसिंह	२०)	फूलसिंह	१५)
सुखवीर	१२)	मंगतसिंह	११)
बलवीर सिंह	११)	देवकरन	११)
ओमपाल	११)	पं० करणसिंह	११)
राकेश	११)	राजसिंह	११)
आर्य समाज देहरा	११)	हरख्याल	११)
ओमप्रकाश	११)	अंगनसिंह	११)
आर्यसमाज नर्सलघाट	११)	नत्थीसिंह	११)
म० अतरसिंह	११)	रामरतन	११)
वहालसिंह	११)	सरोजसिंह	११)
मंगलसिंह	११)	कैलाश	११)
हरिश्चन्द्र	११)	नन्दलाल	११)
जगदीश	११)	प्रतापसिंह	११)
ओमकुमार	११)	सुखवीर	११)
ओमदेव	११)	कमरलाल	११)
रामपाल	११)		

प्रेम अहिंसा की भाषा को दुष्ट समझ ना पाता।
ईंटों का उत्तर पत्थर से उसको यह है भाता।।

मानसिंह	११)	चुन्नीलाल	१०)
ईश्वरचन्द	१०)	छोटेसिंह	१०)
शिवचरण	१०)	अचपल	१०)
सोवरण	१०)	इन्द्रदेव	१०)
नत्थीसिंह	१०)	पीतमसिंह	१०)
शीशराम	१०)	खचेडूसिंह	१०)
ओमकुमार	१०)	बुद्धासिंह	१०)
बुद्धनसिंह	१०)	गूलचन्द	१०)
अचपल सिंह	१०)	राजेन्द्र	१०)
भगवत	१०)	कृपालसिंह	१०)
सुनहरीसिंह	१०)	भूपेन्द्र कुमार	१०)
सरदार विशनसिंह	१०)	सुरेन्द्रपाल	१०)
भागूसिंह	१०)	भोलाराम	१०)
झमेलसिंह	१०)	सूरतसिंह	१०)
सुखपाल	१०)	खचेडूसिंह	१०)
बर्फसिंह	१०)	छत्तरसिंह	१०)
नरपतसिंह	१०)	मेहरवान	१०)
शीशपाल	१०)	रामकिशोर	१०)
चौ० अनूपसिंह	१०)	रघुवीर सिंह	१०)
खजानसिंह	५)	दरयावसिंह	५)
गजयसिंह	५)	वाबू देवीसिंह	५)
जयपालसिंह	५)	सुशीला	५)
हरशरण	६)	जयदेव	५)
अमरमुनि	५)	रामेश्वर	५)
महकारसिंह	५)	कमलसिंह	५)
कमरपाल	५)	बालकराम	५)
किशनलाल	५)	सरूपसिंह	५)

अपराधों का शूल सदा ही मानस में गड़ता है।
यदि उसको स्वीकार किया ना तो प्रतिपल फलता है॥

हरपालसिंह	५)	चौकराज	५)
नरायणसिंह	५)	राजपाल	५)
श्यामसिंह	५)	जगदीशपाल	५)
श्रीराम	५)	धर्मवीर	५)
महीपाल	५)	मधुबाला	५)
रामवीर	५)	बिजेन्द्रसिंह	५)
रवीन्द्र	५)	बोहरा	५)
मा० चिम्मनलाल	५)	लज्जाराम	५)
सहन्सरपाल	५)	शिवली	५)
रामलाल	५)	जगवीर	५)
गंगासरन	५)	रणधीर	५)
गुप्तदान	५)	सुदेक्षणा	५)
गंगासरन	५)	नेकासिंह	५)
त्रिवेणी	५)	धर्मपाल	५)
रामपाल	५)	सत्यपाल	५)
हेतलाल	५)	गजराज	५)
शीशपाल	५)	धर्मपाल	५)
रामप्रकाश	५)	अमरसिंह	५)
हेतराम	५)	जागरसिंह	५)
भोपालसिंह	५)	होरीलाल	५)
फतहसिंह	५)	नरेशचन्द	५)
वीरपाल	५)	सुवरणसिंह	५)
सुरेन्द्र	५)	जानकीदास	५)
कैलाशसिंह	५)	रघुनाथसिंह	५)
नरेशकुमार	५)	उम्मेद	५)
करणसिंह	५)	रमेश चौहान	५)
इन्द्रदेव	५)	खजानसिंह	५)

अपराधी मन सदा सशंकित हर-नर को लखता है।
अपने अपराधों के कारण जग कलुषित दिखता है॥

महीपाल	५)	ध्यानसिंह	५)
अतलसिंह	५)	हरिश्चन्द्र	५)
मा० अलवेल	५)	किरनसिंह	५)
अजीतसिंह	५)	रामचन्द्र	५)
श्योराज सिंह	५)	बालकराम	५)
हरिकिशन	५)	लालसिंह	५)
महावीर सिंह	५)	कमलसिंह	५)
जन्मसिंह	५)	करणसिंह	५)
सरदार अमर	५)	सत्यदेव	५)
शीशराम	५)	झूंठलसिंह	५)
हरशरण	५)	धर्मपाल	५)
महेन्द्र	५)	रामेश्वरदयाल	५)
जयदेव	५)	ओमवीर	५)
सन्तोष	५)	श्यामलाल	५)
मूलचन्द शास्त्री	५)		

इंगलिश बुक डिपो सदर बाजार झांसी	५)
अतल कुमार भाटिया बुक डिपो सदर बाजार झांसी	५)
भाटिया बुक सैंटर मानक चौक झाँसी	५)
भूरेसिंह आदर्श न्यूज ऐजेन्सी बस स्टैंड शिवपुरी (म० प्र०)	५)
चन्देल एण्ड कम्पनी शिवपुरी मध्य प्रदेश	५)
जी० एम० मी० बुक सोप छावनी इन्दोर मध्य प्रदेश	५)
चाँदना बुक हाउस टी० टी० नगर भोपाल मध्य प्रदेश	५)
दत्ता बुक स्टाल बस स्टैंड राजनन्द गाँव मध्य प्रदेश	५)
साहित्य प्रसार केन्द्र सीतावर्डी नागपुर महाराष्ट्र	५)
साहित्य प्रसार केन्द्र सदन अमरावती महाराष्ट्र	५)
उत्कर्ष बुक सेल्सं डैकिन जीमखाना पूना महाराष्ट्र	५)
पंजाब बुक सर्विस महात्मा गाँधी रोड पूना महाराष्ट्र	५)

प्रेरणा (म)

अपराधी निज को तज करके हर में अवगुण लखता ।
पीलिया ग्रस्त नर को सारा जग पीला ही लगता ॥

गजानन बुक स्टोर्स मेन रोड सोलहापुर महाराष्ट्र	५)
भारतीय पुस्तकालय मेन रोड लातूर महाराष्ट्र	५)
लातूर जनरल स्टोर्स लातूर महाराष्ट्र	५)
धन्नजय पुस्तक भंडार सुभाष रोड नांदेड़ महाराष्ट्र	५)
उम्दे बुक सेलर्स औरंगाबाद महाराष्ट्र	५)
गुप्ता बुक डिपो देवास गेट उज्जैन मध्य प्रदेश	५)
बुक्स वर्ल्ड टी० टी० नगर भोपाल मध्य प्रदेश	५)
सुष्मा साहित्य मन्दिर जबलपुर मध्य प्रदेश	५)
नर्वदा बुक डिपो अन्धेर देव जबलपुर	५)
सेठी ब्रदर्स अम्बिकापुर जबलपुर मध्य प्रदेश	५)
किताबघर सदर बाजार बिलासपुर मध्य प्रदेश	५)
सुधीर एण्ड कम्पनी सदर बाजार रायपुर मध्य प्रदेश	५)
भिलाई न्यूज ऐजेन्सी सैक्टर-५ भिलाई मध्य प्रदेश	५)
तुलसी साहित्य सदन खजूरी बाजार इन्दौर मध्य प्रदेश	५)

संस्कृत-महत्व

मानवीय आकांक्षाओं का समुचित रूपायन आपको संस्कृत साहित्य में मिलेगा। मानव का मन जिन आकांक्षाओं के लिए लालायित रहता है, उनका इन्द्रधनुषी चित्र देववाणी के पटल पर देख सकते हैं। यह साहित्य आदमी के त्यागपूर्वक जीवन की प्रशंसा करता है, कर्ममय जीवन की अर्चना में फूल समर्पित करता है और मानवीय पक्ष को जीवन का संगीत समझता है। [संस्कृति के दीप]

× × × ×

कल्पवृक्ष : संस्कृत भाषा

स्वर्ग के विषय में यह वचन-विन्यास सुप्रसिद्ध है कि स्वर्ग में कल्पवृक्ष है, जो कि मानव की हर मनोकामना को पूर्ण कर देता है। मानवीय अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह आख्यान कल्पना प्रसूत है। यदि आप संस्कृत के महकते उपवन में प्रवेश करते हैं, तो आपको यह विश्वास दिलाने में कोई कठिनाई नहीं होगी कि यह साहित्य आपकी हर कामनाओं को पलयित करने में समर्थ है।

[संस्कृति के दीप]

× × × ×

वेद का सन्देश

कामनाओं के चमन में पहुँचकर कौन नहीं झुलस जाता है? परन्तु मित्रवर! वेद तुम्हें आमंत्रण देता है कि तुम अपनी कामनाओं के साथ आओ और तुम अपनी कामनाओं की आग से नहीं झुलस पाओगे। यजुर्वेद का चालीसवां अध्याय तुम्हारे लिये यह सन्देश दे रहा है—"मनुष्य त्यागपूर्वक सांसारिक वस्तुओं का सदुपयोग करते हुए सौ वर्ष तक जीने की कामना करे।" जो आदमी इस प्रकार की जिन्दगी जीने के लिए तैयार हो जाता है, वह कामनाओं की झुलस से बाहर हो जाता है।

[संस्कृति के दीप]

आपकी सेवा में—

आपके विकास के लिए दी फियरलैस स्माल सेविंग एन्ड इन्वेस्ट मैन्ट कम्पनी की लाभप्रद योजनायें प्रस्तुत हैं। आप उसमें अपना खाता खोलकर अधिक लाभ और सुविधा प्राप्त कीजिये।

केवल बचत है उज्जवल भविष्य का आधार।
तो फियरलैस है बिन पैसे का रोजगार॥

अधिक जानकारी के लिए निकटवर्ती एजेन्ट और कार्यालय से शीघ्र सम्पर्क कीजिये।

प्रधान कार्यालय—

दी फियरलैस स्माल सेविंग एन्ड इन्वेस्टमैन्ट कम्पनी

रजि० आ० २३७ चावला कालौनी बल्लभगढ़

शाखा कार्यालय:—

कृष्णा गली, गढ़ रोड, हापुड़

भारत सरकार द्वारा रजि० नं० A 20648/78

—विकास अधिकारी
ओम्पाल सिंह आर्य



आर्य-समाज के नियम

१—सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरूप, निराकार सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४—सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार, अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करने चाहियें।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सब से प्रीति-पूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिये।

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व-हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।